हिन्दी-साहित्य की रूप-रेखा

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

Hindi Sahatya Rokee Roop Rekha

Sri Pratap Singh Library Srinagar.

लेखक—

आत्माराम सूरी, बी० ए०

Atma Ram Soori

51750

SPS
809 A 88 H
13139

प्रकाशक—

सूरी ब्रदर्स

गणपत रोड, लाहौर

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
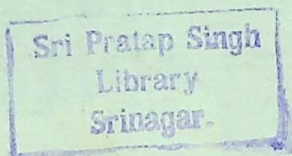
अपनी बात

हिन्दी-भाषा और साहित्य के इतिहास बाबू श्यामसुन्दर दास, पण्डित रामचन्द्र शुक्ल, बाबू धीरेन्द्र वर्मा, पण्डित कृपाशङ्कर शुक्ल, बाबू ब्रजरत्न दास, मिश्र-बन्धु, और डाक्टर सूर्यकांत आदि ने अपने-अपने ढङ्ग पर लिखे हैं। इनमें पं. रामचन्द्र शुक्ल लिखित इतिहास निस्सदेह विद्यार्थियों के अधिक उपयोग का है। उन्होंने विषय को सरल रीति से पाठकों के सामने रखा है। किन्तु यह इतिहास बहुत ऊंची कक्षा के विद्यार्थियों के काम का है।

हिन्दी की उच्चतम कक्षाओं तक पहुँचने से पहले भी विद्यार्थियों को हिन्दी-साहित्य की रूप-रेखा जान लेना आवश्यक है। इसलिए मैंने इस पुस्तक को लिखने का दुस्साहस किया है। इस उद्देश्य से हिन्दी में एक दो पुस्तकें लिखी तो गई हैं किन्तु या तो उनमें रचनाओं के उदाहरण नहीं दिए गये हैं, या विवेचना का ऐसा जाल बिछाया गया है कि पाठक को हिन्दी के आदि काल से आज तक के रूप का ठीक-ठीक परिचय नहीं मिल पाता।

मैंने इस बात का उद्योग किया है कि पाठकों को लम्बी विवेचना की उलझन में न डाल कर, प्रारम्भ से आज तक हिंदी साहित्य में जो जो धाराएँ प्रवाहित हुई हैं, उसमें क्रमशः जो परि-

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

वर्तन हुए हैं, उसके जो-जो प्रसिद्ध साधक हुए हैं, उन सब का सरल रीति से परिचय करा दिया जावे। प्रारंभ काल से आज तक की तस्वीर खींच देने का मेरा प्रयास रहा है।

पुस्तक को लंबी, जटिल या विशृङ्खल न होने देने का मेरा प्रयत्न सफल हुआ या नहीं यह पाठक ही देख सकेंगें।

इस पुस्तक के लिखने में मैंने इस विषय की अनेक पुस्तकों की सहायता ली है, जिसके लिए उनके लेखकों का आभार स्वीकार करता हूँ।

—रामचन्द्र 'कुशल'

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

विषय-सूची

	विषय	पृष्ठ संख्या
१.	हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकास	१
२.	काल-विभाजन	२८
३.	वीर काल-अपभ्रंश रचनाएं	३१
४.	वीर काल-देश भाषा के काव्य	३६
५.	वीर-काल—अन्य कवि	४२
६.	भक्ति-काल—प्रमुख धाराएँ	४६
७.	भक्ति-काल—प्रेम मार्ग	५८
८.	भक्ति काल—कृष्ण भक्ति धारा	६३
९.	भक्ति काल—राम भक्ति धारा	८०
१०.	भक्ति काल—अन्य कवि	८७
११.	रीति-काल	९७
१२.	रीति-काल—अन्य कवि	१०८
१३.	क्रान्ति काल—प्रवेश	११७
१४.	क्रान्ति काल—परिवर्तन काल की कविता	१२१
१५.	क्रान्ति काल—नवीन धारा	१३०
१६.	गद्य-साहित्य—प्रारंभिक काल	१४४
१७.	गद्य-साहित्य—नवीन धारा	१६२

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

हिन्दी साहित्य की रूप-रेखा

हिन्दी भाषा की उत्पत्ति और विकास

वैदिक भाषा

हिन्दी भाषा का सम्बन्ध परंपरा से भारतवर्ष की सब से पुरानी भाषा 'वैदिक' के साथ है। वैदिक भाषा वैदिक काल के आर्यों की बोलचाल की भाषा थी, जिसका साहित्यिक रूप ऋग्वेद तथा अन्य वेदसम्बन्धी ग्रन्थों में मिलता है।

संस्कृत

अन्य पदार्थों के समान भाषा में भी परिवर्तन स्वाभाविक है, जो बोलचाल की भाषा में अधिक और शीघ्र तथा साहित्यिक भाषा में कम और देर से लक्षित होता है। भाषा में परिवर्तन किन कारणों से,किन नियमों के आधार पर होता है। यह 'भाषाविज्ञान' का विषय है। इस पर यहां विशेष लिखने का स्थान नहीं। साधारणतः समय-प्रभाव, देश-भेद, लोगों की सरलता की ओर स्वाभाविक प्रवृत्ति आदि भाषा-परिवर्तन के कारण हैं। पहले आर्यों का केन्द्र पंजाब था। अनन्तर वह धीरे धीरे पूरब की ओर सरकता गया। इस प्रकार देश-भेद तथा अन्य कारणों से समय पाकर वैदिक भाषा में परिवर्तन होते होते 'संस्कृत' का विकास हुआ। इस परिवर्तन और विकास का क्रम वेदों, ब्राह्मणों, उपनिषदों, सूत्रों और वाल्मीकि, व्यास, भास, कालिदास, आदि की रचनाओं से स्पष्ट

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अवगत होता है। संस्कृत सदियों तक सारे भारतवर्ष की सभ्य और शिष्ट भाषा एवं राज-भाषा रही। इसी में वह व्यापक और विशाल साहित्य लिखा गया, जो आर्यों की संस्कृति और सभ्यता का आधार है, जिस में दर्शनशास्त्र से लेकर शिल्प-कला, काव्य, नाटक तक समस्त आध्यात्मिक और लौकिक विषयों का गम्भीर और विशद निरूपण है तथा जो सदियों के घोर विध्वंस के बाद भी संसार के समृद्धतम साहित्यों में उत्कृष्ट स्थान रखता है। परन्तु पाणिनि ने अपना सुप्रसिद्ध व्याकरण रचकर संस्कृत को ऐसा नियम-बद्ध कर दिया कि इसका परिवर्तन सदा के लिए रुक गया। तब से आज तक यह पाणिनि-व्याकरण के अनुसार ही प्रयोग में लाई जाती है।

प्राकृत

जब व्याकरण के अनुसार संस्कृत का प्रयोग शिष्ट-समुदाय में सर्वमान्य हो गया तब व्याकरण के विरुद्ध प्रयोगों को दूषित (च्युत संस्कार) और अशिष्ट समझा जाने लगा और वैसे प्रयोग करने वालों की अवहेलना की जाने लगी। इस प्रकार साहित्यिक रूप में तो संस्कृत सर्वथा परिवर्तन शून्य हो गई परन्तु बोल चाल में व्याकरण के प्रतिबन्धों और अशिष्टता के आक्षेपों के रहते भी परिवर्तन का विश्वव्यापी नियम काम करता ही गया। ज्यों २ समय बीतता गया साधारण लोग संस्कृत शब्दों के शुद्ध उच्चारण में कठिनाई अनुभव करने लगे और अशुद्ध उच्चारण के कारण संस्कृत शब्द विकृत होने लगे[१]। यह विकार सर्वत्र एकसा न था

---

१ "दैवी वाग् व्यवकीर्णेयमशक्तैरभिधातृभिः" (भर्तृहरि) अर्थात्

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

किन्तु भिन्न २ प्रान्तों में जल-वायु भेद के कारण कुछ भिन्न था। इसके परिणाम स्वरूप अलग २ प्रान्तों में अलग २ बोलियां (Provincial vernaculars) विकसित हुईं, जिन्हें प्राकृत (साधारण, Common, uncultured) लोगों की बोलचाल† में व्यवहृत होने के कारण अथवा प्रकृति (मूल भाषा) संस्कृत से विकृत होकर बनने के कारण 'प्राकृत कहा गया* ।

यह संस्कृत भाषा बोलने वालों की अशक्ति (शुद्ध उच्चारण न कर सकने) के कारण विकृत होगई।

† "प्रकृतिः संस्कृतं तत्र भव तत आगतं च प्राकृतम्"—हेमचन्द्र ।

* यहां यह लिख देना आवश्यक प्रतीत होता है कि प्राकृत की उत्पत्ति के विषय में दो मत हैं—(१) वैयाकरणप्रवर भर्तृहरि, प्राकृत व्याकरणकार वररुचि, हेमचन्द्र आदि प्राचीन भारतीय आचार्य प्राकृत की उत्पत्ति संस्कृत से मानते हैं । प्रकाण्ड विद्वान् रामकृष्ण गोपाल भण्डारकर भी इसी मत को स्वीकार करते हैं । इस के विपरीत (२) पाश्चात्त्य विद्वान् प्राकृत का संस्कृत से उत्पन्न होना नहीं मानते । उनके मत में वेदों की साहित्यिक भाषा परिवर्तन होते २ संस्कृत बनी, जो साहित्यकों या पण्डितों की ही भाषा रही । जन-साधारण की बोल-चाल में कभी इस का प्रयोग नहीं हुआ । साधारण जनता की बोली तो प्राकृत ही थी, जो वैदिक काल की बोल-चाल की भाषा से (जिसे मूल प्राकृत कह सकते हैं) विकृत होकर बनी न कि संस्कृत से । इस मत का भण्डारकर महोदय ने अपने "भाषा तत्व संबन्धी व्याख्यानों" में बड़ी विद्वत्ता से खण्डन किया है ।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

संस्कृत से विकृत होकर बनने वाली बोलियों में सर्व-प्रथम 'पाली' है। इस में संस्कृत के शुद्ध और विकृत

प्राकृत के भेद

रूपों का संमिश्रण है। दूसरे शब्दों में इसे प्राकृत की प्रथमावस्था कह सकते हैं। यह बौद्ध-धर्म की पवित्र भाषा है। सर्वसाधारण में प्रचार की दृष्टि से बुद्ध ने इसी में उपदेश किया और बौद्ध-साहित्य प्रायः इसी में लिखा गया। दूसरी प्राकृतें अपने २ प्रान्त के नाम से मागधी, शौरसेनी, माहाराष्ट्री आदि कहलाईं। मागधी मगध देश (बिहार) की बोली थी, शौरसेनी शूरसेन प्रदेश (मथुरा के आसपास व्रजमण्डल) की और माहाराष्ट्री महाराष्ट्र प्रान्त की। मागधी और शौरसेनी के मिश्रण से एक और बोली उत्पन्न हुई, जिसे अर्धमागधी कहते हैं। पश्चिमोत्तरीय पहाड़ी प्रान्त में पैशाची प्राकृत बोली जाती थी। यहां यह जान लेना आवश्यक है कि ये प्राकृतें एक दूसरी से स्वतंत्र पृथक् रहकर विकसित नहीं हुईं किन्तु मूल भाषा संस्कृत से विकृत होकर बनने से परस्पर सादृश्य रखती हुई, एक दूसरी पर गहरा प्रभाव डालती हुई, प्रान्त भेद के कारण भिन्न २ रूपों में परिणत हुई हैं। इनका प्रयोग अशोक आदि के लेखों तथा संस्कृत नाटकों में किया गया है। नाटकों में स्त्री पात्र और विदूषक शौरसेनी का तथा चेट आदि अधम पात्र मागधी का प्रयोग करते हैं। गीतों और पद्यों में माहाराष्ट्री का प्रयोग किया जाता है। माहाराष्ट्री में सेतुबन्ध, गौडवहो (गौडवध) आदि कई स्वतन्त्र काव्य भी लिखे गये हैं। पैशाची में गुणाढ्य ने "बृहत्कथा" लिखी थी,

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

जो अब उपलब्ध नहीं होती। हां, उसके संस्कृत-अनुवाद "बृहत्कथा मञ्जरी" आदि मिलते हैं। जैनों के श्वेताम्बर-संप्रदाय सूत्र ग्रंथ अर्धमागधी में हैं और अन्य ग्रंथ जैन माहाराष्ट्री में, जो माहाराष्ट्री का ही कुछ भिन्न रूप हैं। इसी प्रकार जैनों के दिगम्बर-संप्रदाय के ग्रंथ जैन शौरसेनी में हैं, जो शौरसेनी का ही कुछ भिन्न रूप है।

अपभ्रंश

यह एक स्वाभाविक नियम है कि जब बोलचाल की भाषा साहित्यिक रूप धारण कर लेती है तब आरम्भ में यद्यपि उसके साहित्यिक और बोल चाल के रूप में बहुत अधिक अन्तर नहीं होता (जैसे संस्कृत और पाली में), परन्तु ज्यों २ समय बीतता जाता है अन्तर बढ़ता ही जाता है, यहाँ तक कि कुछ समय के पश्चात् साहित्यिक भाषा बोल चाल की भाषा से सर्वथा भिन्न प्रतीत होने लगती है (जैसे संस्कृत प्राकृत से)। क्योंकि साहित्यिक भाषा में परिवर्तन बहुत कम होता है और व्याकरण के नियमों से यन्त्रित होने पर तो उसका परिवर्तन सर्वथा रुक जाता है। यही अवस्था साहित्य में प्रयुक्त होने वाली प्राकृतों की हुई। वररुचि आदि व्याकरणकारों ने उन्हें नियम बद्ध कर दिया और वे प्रायः परिवर्तन शून्य हो गईं। परन्तु इन साहित्यिक प्राकृतों की जिन बोल चाल की प्राकृतों के आधार पर सृष्टि हुई थी, वे प्रति दिन जन साधारण में प्रयुक्त होने के कारण व्याकरण नियमों में बाँधी नहीं जा सकती थी। उनमें स्वभावतः परिवर्तन जारी रहा और कालांतर में विकास को प्राप्त होकर

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
उन्होंने पृथक् बोलियों का रूप धारण कर लिया। साहित्य में प्रयुक्त होने से परिमार्जित और व्याकरण नियमों से यन्त्रित प्राकृतों के मुकाबिले में वैयाकरणों ने लोगों की इन नई बोलियों को 'अपभ्रंश' (बिगड़ी हुई भाषा) का नाम दिया। ये अपभ्रंश भाषाएं जिन प्रान्तीय प्राकृतों से बिगड़ कर बनी उन्हीं के नाम से पुकारी जाने लगी। जैसे मागधी-अपभ्रंश, शौरसेनी-अपभ्रंश (इसे 'नागर' भी कहते हैं), माहाराष्ट्री-अपभ्रंश-इत्यादि। धीरे २ प्राकृतों के समान अपभ्रंश भाषा भी साहित्य में प्रयुक्त होने लगी। इसके उपलब्ध साहित्य का सब से प्राचीन उदाहरण विक्रम की दशम शताब्दी के अंत में होने वाले जैन ग्रंथकार देवसेन की रचनाएँ हैं। उनके 'श्रावकाचार' ग्रंथ की भाषा अपभ्रंश के अधिक प्रचलित रूप को प्रकट करती है। जैसे—

"जो जिण सासण भाषियउ सो मइ कहियउ सारु।*
जो पाले सइ भाउ करि सो तरि पावइ पारु॥"

इसके अनन्तर हेमचन्द्र (संवत् ११५०-११९९) के "सिद्ध-हेमचन्द्र-शब्दानुशासन" में भी अपभ्रंश के दोहे उद्धृत हैं, जिनमें से अधिकांश प्राचीन हैं। जैसे—

भल्ला हुआ जु मारिया बहिणि हमारा कंतु।$
लज्जेजंतु वयंसिअहु जइ भागा घर एंतु॥"

---

* अर्थात् जो जिन-भगवान् ने उपदेश कहा वह सार रूप में मैं ने कहा है। जो मनुष्य सच्चा भाव कर उसका पालन करेगा वह तरकर पार पाएगा।

$अर्थात् बहन, भला हुआ जो मेरा पति मारा गया यदि वह भागा हुआ घर आता तो मैं अपनी सखियों में लज्जित होती।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ऊपर दिये उदाहरण साहित्यिक अपभ्रंश के नमूने हैं, जिसका कविता में प्रयोग पीछे भी बहुत दिनों तक किया जाता रहा। विक्रम की चौदहवीं शताब्दी के मध्य में शार्ङ्गधर ने 'हम्मीर रासो' और पन्द्रहवीं शताब्दी में विद्यापति ने 'कीर्तिलता' (तिरहुत के राजा कीर्तिशाह की प्रशंसा) अपभ्रंश में ही लिखी। विद्यापति का उपभ्रंश पूरबी है और इसमें कुछ देशी और तत्सम शब्दों का भी प्रयोग पाया जाता है। जैसे—

' पास बइसि बिसवासि राय गयनेसर मारल ।"

\+ \+ \+

"सुरराय नयर नरग्रर-रमणि बाम नयन पप्फुरिअ धुअ ।"

इस में 'मारल' क्रिया पूरबी (विहारी) की है और नयन शब्द तत्सम ।

कालक्रम से बोलचाल के अपभ्रंशों में परिवर्तन होते २ भारत वर्ष की वर्तमान प्रान्तीय बोलियों का विकास

वर्तमान प्रान्तीय बोलियां हुआ जैसे—मागधी अपभ्रंश से बिहारी, जिसकी शाखाएँ मैथिली, मगही भोजपुरी हैं। उड़िया, बंगला और आसामी भाषाओं से भी इसका संबन्ध माना जाता है। अर्धमागधी अपभ्रंश से पूर्वी हिन्दी, जिस की शाखाएं अवधी, छत्तीस गढ़ी, बाघेली हैं। शौरसेनी-अपभ्रंश से पश्चिमी हिन्दी, जिस की शाखाएं व्रज भाषा, कन्नौजी, बुंदेली, बांगरू और मेरठ के आस पास के प्रदेश की भाषा हैं यही मेरठ के आस पास की भाषा आजकल 'खड़ी बोली' कहलाती है। पश्चिमी हिन्दी का

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

संबन्ध राजस्थानी, गुजराती और पंजाबी से भी माना जाता है। माहाराष्ट्री-अपभ्रंश से मराठी, जिसकी शाखाएँ कोंकणी, बराड़ी नागपुरी हैं। पैशाची-अपभ्रंश से लहँदा, काश्मीरी आदि।

इस प्रकार अपभ्रंश प्राकृतों और वर्तमान भाषाओं की मध्य-वर्ती अवस्था है। वर्तमान पूर्वी और पश्चिमी हिन्दी जब अपभ्रंश से पृथक् होकर अपने वर्तमान रूपों की ओर अग्रसर हो रही थीं वह इन की आरम्भिक अवस्था थी। पूर्वी हिन्दी की उस अवस्था का कुछ आभास ऊपर विद्यापति की कीर्तिलता' से उद्धृत किये गये अंश में पाया जाता है और पश्चिमी हिन्दी की उस अवस्था का स्पष्ट नमूना चंदबरदाई की रचना "पृथ्वीराज रासो" में मिलता है और इसी लिये यह पश्चिमी हिंदी का महाकाव्य माना गया है। जैसे—

हिन्दी की आरम्भिक अवस्था

"सवालक्ख उत्तर सयल, कमऊं गढ़ दूरंग।
राजत राज कुमोदमनि, हयगय द्रिव्व अभंग॥
नारिकेलि फल परठि दुज, चौक पूरि मनि मुत्ति।
दई जु कन्या वचनवर, अति आनंद करि जुत्ति॥"

इसमें सवालक्ख (सपादलक्ष, शिवालिक रेंज) सयल (शैल) गय (गज), मुत्ति (मुक्ता, मोती), जुत्ति (युक्ति) आदि शब्द अपभ्रंश के हैं, उत्तर, हय, कन्या वचन आदि तत्सम हैं। और दई क्रिया व्रजभाषा की है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

कुछ विद्वान् बिहारी भाषा को हिन्दी के अन्तर्गत नहीं मानते, क्योंकि उसका बंगला आदि के साथ अधिक-संबन्ध है। परन्तु बंगला आदि के साथ संबन्ध होने पर भी उसका पूर्वी हिन्दी के साथ अधिक साहश्य है और शायद इसी लिये हर्नल महोदय ने अपनी "गौडियन ग्रामर" (सन् १८८०) बिहारी भाषा को 'पूर्वी हिन्दी' के नाम से लिखा है। अतः आजकल विद्वान उसे हिन्दी के ही अन्तर्गत मानते हैं और मैथिली भाषा के कविवर विद्यापति को हिन्दी के उत्कृष्ट कवियों में स्थान देते हैं (चाहे दूसरी ओर बंगाली भी उसे अपना कवि मानते हैं)। बिहारी की तीन शाखाओं में से मैथिली में विद्यापति तथा बहुत से अन्य लेखकों की रचनाएं प्रसिद्ध हैं परन्तु मगही और भोजपुरी में साहित्य निर्माण नहीं हुआ। भोजपुरी में कुछ गीत अवश्य पाये जाते हैं, जो मधुर और भावपूर्ण हैं।

पूर्वी हिन्दी

पूर्वी हिन्दी पश्चिमी हिन्दी के पूर्व में संयुक्त प्रांत मध्य प्रान्त तथा मध्य भारत के कुछ भागों में बोली जाती है। इसकी तीन शाखाओं में से साहित्य की दृष्टि से अवधी प्रधान है। भक्त शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास ने "रामचरित मानस" (तुलसी-रामायण) इसी भाषा में रचा है जो न केवल हिन्दी साहित्य में अपितु संसार भर के साहित्यों में एक अमूल्य रत्न है। इससे पहले कई मुसलमान सूफ़ी कवियों ने तथा कुछ हिन्दू कवियों ने भी इसी भाषा में दिव्य ईश्वरीय प्रेम की मनोहर अभिव्यञ्जना करने वाली सुन्दर कथाएं

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

काव्य-रूप में रचीं, जिनमें मलिक मुहम्मद जायसी की 'पदुमावती' या 'पद्मावत' कथा सर्वोत्कृष्ट है।

पश्चिमी भाषा

पश्चिमी हिन्दी की शाखाओं में व्रजभाषा व्रजमण्डल में मथुरा और आगरा के आस-पास, कन्नौजी व्रजभाषा के पूर्व गङ्गा दोआब के उत्तरीय भाग में, बुन्देली बुन्देलखण्ड और मध्य भारत के एक भाग में बोली जाती है। बांगरू (जिसे हरियानवी या जाटू भी कहते हैं) पूर्व-दक्षिण पंजाब (हिसार, रोहतक के आदि) में और मेरठ के आस-पास की बोली (वर्तमान खड़ी बोली जिसका व्यापकरूप है) व्रजभाषा के उत्तर में अम्बाला से रियासत रामपुर तक बोली जाती है। इसकी उत्पत्ति में व्रजभाषा और पंजाब का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। पाश्चात्य विद्वानों ने इसी को 'बोल-चाल की हिन्दुस्तानी' का नाम दिया है। वर्तमान साहित्यिक खड़ी बोली और उर्दू इसी के परिष्कृत रूप हैं।

व्रजभाषा

पश्चिमी हिन्दी की उल्लिखित बोलियों में साहित्यिक दृष्टि से व्रजभाषा ही प्रधान रही है। इसका सदियों से प्रायः सारे उत्तर भारत की कवितापर एकाधिपत्य रहा है। इसके माधुर्य आदि गुणों के कारण इतर भाषाभाषी कवियों ने कविता के लिए इसी को अपनाया था। यहाँ तक की पंजाब के सुदूर पहाड़ी प्रान्त जम्मू, कांगड़ा आदि में भी कविता की प्रधान भाषा यही रही है। जम्मू के दत्त (दित्तू) कवि का 'द्रोणविलास' (महाभारत के द्रोणपर्व का उत्कृष्ट पद्य

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

मय अनुवाद) तथा कुछ अन्य कृतियाँ व्रजभाषा में ही हैं। गम्भीरराय आदि कांगड़ा प्रान्त के कवियों की भी कुछ व्रजभाषा की रचनाएं उपलब्ध हुई हैं। बहुत से कवि आज भी व्रजभाषा में कविता करते हैं। परन्तु जब से कविताक्षेत्र पर खड़ी बोली ने अधिकार किया है तब से व्रजभाषा का बहिष्कार होता जारहा है। नवीन युग के होनहार कवि तो प्रायः सभी खड़ी बोली में ही कविता करते हैं। विशेषतः गद्य के क्षेत्र में तो इसने साम्राज्य ही जमा लिया है।

खड़ी बोली

मेरठ के आस-पास की बोली, जिसे आजकल 'खड़ी बोली' कहते हैं, व्रजभाषा आदि के साथ ही जन्म पाकर अपने प्रान्त में बोलचाल और गीतों पहेलियों, मुकरनियों आदि के रूप में प्रयुक्त होती रहती है। प्रत्येक भाषा में साहित्य का आरम्भ गीतों आदि के रूप में ही होता है, जो बोलचाल की भाषा में ही रचे जाते हैं। विक्रम की चौदहवीं सदी में अमीर खुसरों ने जो हिन्दी में कविता करने वाले पहिले मुसलमान हैं, कुछ पहेलियां, मुकरनियाँ और गीत लिखे। इनमें से कुछ में व्रजभाषा का मिश्रण है और कुछ खालिस खड़ी बोली में हैं। जैसे—

"सरब सलोना सब गुण नीका
वा बिन सब जग लागे फीका ;

वाके सिर पर होवे कौन
ऐ सखि, साजन ? ना सखि, "लौन" ॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

"सरकण्डों के ठट्ट बंधे और बंद लगे हैं भारी।
देखी है पर चाखी नाहीं लोग कहें हैं खा री॥"

"अम्मा, मेरे बाबा को भेजो जी कि सावन आया।
बेटी, तेरा बाबा तो बुड्ढारी, कि सावन आया॥"

"खड़ा भी लोटा पड़ा भी लोटा है बैठा और कहें है लोटा।
खुसरो कहै समझ का टोटा॥"

"खीर पकाई जतन से चरखा दिया जला।
आया कुत्ता खा गया तू बैठी ढोल बजा॥"

ऊपर के उदाहरणों में पहले दूसरे में वा, लागे, वाके, चाखी आदि कुछ शब्द ब्रजभाषा के हैं और शेष उदाहरणों में खालिस खड़ी बोली है, ठीक वैसी ही जैसी कि आज है। इससे यह भी स्पष्ट है कि अमीर खुसरो से बहुत पहले ही खड़ी बोली में गीत पहेलियाँ आदि अवश्य प्रचलित रही होंगे, जिनके नमूने पर उसने गीत्त आदि लिखे।

कुछ लोगों की यह धारणा है कि खड़ी बोली कुछ अधिक प्राचीन नहीं है, किन्तु चन्द के 'पृथ्वीराजरासो' की भाषा से ब्रजभाषा निकली और ब्रजभाषा से धीरे २ खड़ी बोली का विकास हुआ। विचार करने पर यह बात सर्वथा विपरीत प्रतीत होती है। क्योंकि चन्द ने राजस्थान में रहते हुए कविता की, इसलिये उसकी भाषा में राजस्थानी भाषा का मिश्रण है। राजस्थानी भाषा चन्द की भाषा के अधिक समीप है परंतु ब्रजभाषा से उसका विशेष सम्बंध नहीं दिखाई देता! इसी प्रकार ब्रजभाषा से भी

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

खड़ी बोली का निकलना प्रमाणित नहीं होता। प्रत्युत अमीर खुसरो की कविता से यही सिद्ध होता है कि उससे बहुत पहले खड़ी बोली अपने प्रान्त में सुव्यवस्थित थी। चन्द लगभग विक्रम की तेरहवीं सदी के मध्यभाग में थे और अमीर खुसरो चौदहवीं सदी के प्रथम भाग (सम्वत् १३१२) में पैदा हुए। इन दोनों में केवल चौसठ-पैंसठ वर्ष का अंतर है। इतने थोड़े समय में चन्द की भाषा से पहले व्रजभाषा का निकलना और फिर उससे खड़ी बोली का विकसित होकर ऐसे सुव्यवस्थित रूप में आना, जो आज खुसरो से ६०० वर्ष बाद भी वैसा ही है, किसी प्रकार संम्भव नहीं होसकता। अतः खड़ी बोली व्रजभाषा आदि के समान ही प्राचीन है अर्वाचीन नहीं और न इसका जन्म उर्दू से हुआ है, जैसे कई मुसलमान कहते हैं कि उर्दू से अरबी-फारसी के शब्दों को निकाल कर उनके स्थान पर देशी या संस्कृत के शब्द रखने से खड़ी बोली बनी है। प्रत्युत वास्तविक बात यह है कि उर्दू खड़ी बोली से बनी है और उसकी एक उपभाषा है।

जब मुसलमानों की बादशाहत दिल्ली में क़ायम हो गई और

उर्दू

उनके लश्कर वहाँ रहने लगे तब वे अपनी भाषा फारसी द्वारा, जिसे वहाँ के लोग नहीं समझते थे, अपने भाव उन पर प्रकट नहीं कर सकते थे। इसलिये उन्होंने मेरठ व दिल्ली की बोलचाल की भाषा को ही व्यवहार के लिये अपनाया। परन्तु उनकी बोलचाल में स्वभावतः ठेठ शब्दों के साथ अरबी-फारसी के शब्दों का भी प्रयोग होता

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

था। इस प्रकार यह मिश्रित भाषा मुसलमानी फौजों की छावनी में बोली जाने लगी। तुर्की भाषा में उर्दू, लश्कर या फौज को कहते हैं। इस कारण समय पाकर यह भाषा उर्दू कहलाने लगी परन्तु वास्तव में यह हिन्दी (खड़ी बोली) ही थी। क्योंकि इसमें अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग भी हिन्दी-व्याकरण के अनुसार ही किया जाता था, फारसी-व्याकरण के अनुसार नहीं और किसी भाषा का स्वरूप-निर्णय उसके व्याकरण से ही होता है न कि शब्दभण्डार से। शब्द तो भिन्न २ जातियों के परस्पर मेल और व्यवहार से भाषाओं में आते ही रहते हैं।

हाफिज़ महमूद शेरानी ('पञ्जाब में उर्दू' पृ० २) के अनुसार भाषा के लिए उर्दू शब्द का प्रयोग कोई सौ-सवासौ साल से होने लगा है। साहित्य में सब से पहले मीर मुहम्मद अताहुसैन खान ने अपनी पुस्तक 'नौतर्ज़ मुरस्सा' (हि० सन् १२१३) में उर्दू शब्द का भाषा के लिए प्रयोग किया है। इससे पूर्ववर्ती मुसलमान तो अपने समय की इस भाषा को रेख़ता, हिंदी, हिंदवी या हिंदुई आदि नामों से पुकारते थे। रेख़ता शब्द का अर्थ है 'गिरा पड़ा, बिखरा हुआ या मिला जुला'। क्योंकि उस समय मुसलमान हिंदी का ठीक २ और शुद्ध प्रयोग नहीं कर सकते थे किंतु टूटी-फूटी भाषा में बातचीत करते और इसमें अरबी-फारसी के शब्द मिले जुले होते थे इसलिए इसे वह 'रेखता' कहते थे। बाद को रेखता' शब्द कविता की भाषा के लिये और फिर छन्द या गीत विशेष के लिए प्रयुक्त होने लगा, जिसमें उस समय अधिकतर कविता लिखी जाती थी।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

'हिंदी' या 'हिंदवी' नाम इस भाषा का सब से पुराना है, जो मुसलमान लेखकों की पुस्तकों में मिलता है। जैसे—

"हैं अरबी बोल केरे और फारसी बहुतेरे।
यह 'हिंदी' बोलूं सब इन अर्थों के सबब" ॥

(शाह मीरां जी हि० सन् ७०२ 'रिसाला खुश नगज')

"तुरकी अरबी हिंदवी' भाषा जेती आहि।
जामें मारग प्रेम का सबै सराहैं ताहि" ॥

(मलिक मुहम्मद जायसी 'पद्मावत' हि० सन् १६४७)❀

मुसलमानों के राज्य विस्तार करते हुए भारत के भिन्न २ भागों में फ़ैलने से उनके द्वारा यह भाषा भी सर्वत्र प्रचार पा गई और भिन्न २ प्रान्तों के लोगों के परस्पर भावविनिमय के लिये एक साधारण भाषा (Lingua franka) हो गई। गुजरात के मुसलमान लेखक इसे 'गूजरी' कहते थे और दक्षिण के 'दकनी'। जैसे—

❀इसी प्रकार शेख बाजिन ने, जिनकी मृत्यु हि० सन् ६१२ में हुई, दिल्ली प्रान्त में बोली जाने के कारण इस भाषा को 'जबानेदेहलवी' कहा है। इसका नमूना यह है—"वह कितनी क्या किसे मिलती है। जब मिलती है तब छजती है।" और मौलाना वजही ने अपनी पुस्तक 'सबरस' में, जिसकी रचना मौलवी, अब्दुलहक़ के विचारानुसार हि० सन् १०४० से कुछ पीछे हुई, इसी भाषा को 'जबानेहिन्दोस्तान' कहा है। जैसे—"आगाज़ दोस्तान, 'जबानेहिन्दोस्तान'। नक़ल इक शहर था उसका नाऊं सीस्तान।"

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

"लिखी मनै यूसफ ज़ुलैखा ।

हरयक जाने है क़िस्सा फ़ारसी में,

अमीं इसको उतारी 'गूज़री' में ।

कि बूझे हर कदाम इसकी हकीकत,

बड़ी है 'गूजरी जग बींच नेमत ।।

(अमीन 'यूसफ जुलैखा' हि० सन् ११०६)

"यो मसलयां को 'दकनीं' किया इस सबब ।

फ़हम करके दिल में करैं याद सब ।।"

(शाह मलिक बीजापुरी 'रिसाला अहक्कामुस्सलवात' हि० सन् १०७७)

ऊपर के उदाहरणों से यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि यहां के पुराने मुसलमान जिस भाषा में बातचीत या कविता करते थे यह स्वभावतः आनेवाले कतिपय अरबी-फारसी शब्दों को छोड़ कर ठेठ हिंदी ही होती थी। नीचे के उदाहरणों से इस बात की और भी पुष्टि होती है।

"पिया बिन मेरे तईं वैराग भाया है जो होनीं हो सो हो जावे ।
भभूत अब जोगियों का अङ्ग लगाया है जो होनीं हो सो हो जावे ।।"

—अशरफ़

"हम तो तुमको दिल दिया तुम दिल लिया और दुख दिया ।
तुम यह किया हम वह किया यह भी जगत की रीति है ।।"

—सादी

मुहम्मद शाह के शासन काल में शाह वलीअल्लाह नामक कवि दक्षिण से दिल्ली की समृद्धि से आकृष्ट होकर यहाँ चले आए, जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है—

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

"दिल वलीं का लिया दिल्ली ने छीन।
जा कहो कोई मुहम्मद शाह सूं॥"

उनके आते ही दिल्ली में कविता शौक बढ़ा और नये २ कवि पैदा होने लगे। इसी से उर्दू कविता का आरम्भ प्राय: वली से माना जाता है। कुछ दिनों तक तो उर्दू के कवियों की कविता में खड़ी बोली का ही प्रयोग होता रहा परन्तु ज्यों २ मुसलसानों की अधिकता होती गई त्यों २ उनमें अपनापन आता गया। उनमें अपनी भाषा को एक स्वतन्त्र रूप देने का विचार प्रबल होता गया और लखनऊ-संप्रदाय के लेखकों की इसे फ़ारसी का रूप देने में विशेष प्रवृत्ति हुई बहुत अंशों में फ़ारसी-व्याकरण का अनुसरण किया जाने लगा और वाक्य-विन्यास का ढंग बदल गया। इस प्रकार 'उर्दू' एक स्वतन्त्रसी, अलगसी भाषा बन गई। इस में यह बात ध्यान देने योग्य है कि उर्दू को समृद्ध और सम्पन्न करने में हिन्दुओं का विशेष कर कायस्थ जाति के हिन्दुओं का बहुत बड़ा हाथ है। दिल्ली के अन्तिम बादशाहों और लखनऊ के नवाबों के प्रभाव से मुसलमानों तथा फ़ारसी पढ़े-लिखे हिंदुओं ने उर्दू भाषा को देश के कोने २ में पहुँचा दिया और पढ़े-लिखे मुसलमानों तथा हिंदुओं में सर्वत्र इसका प्रचार हो गया। इस प्रकार यह सारे भारत की एक शिष्ट भाषा और व्यवहार-भाषा हो गई। इसी कारण अंग्रेजी शासन के आरम्भ में अंग्रेज़ शासकों ने भी इसे ही अपनाया। सरकारी स्कूलों में यह पढ़ाई जाने लगी और अंग्रेज़ी के साथ २ सरकारी दफ्तरों तथा अदालतों में इसी का प्रयोग होने

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

लगा यह फ़ारसी अक्षरों में लिखी जाती है। मुसलमान इसे अपनी संस्कृति और सभ्यता की सूचक मानते हैं और इसकी उन्नति करना अपना कर्तव्य समझते हैं।

मुसलमान और हिन्दी

हिन्दी भाषा की उन्नति और श्रीवृद्धि में मुसलमानों का बहुत बड़ा भाग है। उन्होंने बोलचाल के लिये हिन्दी को अपनाकर अपने राज्य विस्तार के साथ साथ सारे भारतवर्ष में फैलाया और सब प्रान्तों के लोगों के परस्पर भाव विनमय के लिये एक सामान्य भाषा बनाई तथा इसके रूप को सुस्थिर एवं व्यवस्थित किया। मुसलमान बादशाहों ने हिन्दी के कवियों को आश्रय तथा संमान प्रदान करके हिन्दी कविता को प्रोत्साहन दिया। कुतबन मलिक मुहम्मद जायसी आदि सूफ़ी कवियों ने अवधी में अनूठे काव्य लिखे। ख़ानख़ाना रहीम, रसखान, मुबारक आदि ने ब्रजभाषा के साहित्य को अपने कविता-रत्नों से आलोकित किया। आधुनिक काल में भी स्वर्गीय अमीर अली मीर, स्वर्गीय मुन्शी अजमेरी, ज़हूर बख़्श आदि कई मुसलमान लेखक हिन्दी-साहित्य की सेवा करते रहे हैं और कर रहे हैं।

हिन्दी की वर्तमान अवस्था

उर्दू के हिन्दी से अलग होने और अंग्रेज़ी राज्य में सरकारी भाषा बनजाने के बाद उर्दू तथा अंग्रेज़ी की शिक्षा पाकर बाबू लोग सरकारी दफ्तरों में नौकरियाँ पाने लगे, बदले हुये राजनैतिक वातावरण में विदेशी भाषा की शिक्षा से नये २ भाव हृदय

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

में घर करने लगे। उनके आवेश तथा अंग्रेज़ अफ़सरों के संसर्ग से वे लोग अपने आपको साधारण जनता से कुछ भिन्न सा, विशिष्ट-सा समझने लगे। वे लोग बातचीत भी उर्दू या अंग्रेज़ी में ही करने लगे। अपनी भाषा के लिये उनके हृदय में उपेक्षा अथवा घृणा उत्पन्न होगई। पहले लोग धर्म-भावना से प्रेरित होकर बड़े आदर भाव से तुलसीरामायण, सूरसागर आदि हिन्दी की श्रेष्ठ रचनाओं का पठन-परिशीलन किया करते थे, परन्तु विदेशी शिक्षा के प्रभाव से उस समय लोगों की धर्म-भावना, शिथिल होती जा रही थी और सूर, तुलसी का परिशीलन बन्द होता जा रहा था। घर में तो वे लोग स्त्रियों और बच्चों के साथ अपनी भाषा में बातचीत कर लेते थे परन्तु घर के बाहर संभवतः असभ्य या गँवार समझे जाने के डर से अपनी भाषा काप्रयोग नहीं करते थे, इस प्रकार हिन्दी घरों की संकुचित परिधि में बन्द हो गई, केवल स्त्रियों बच्चों या अपढ़ लोगों की भाषा रह गई।

यद्यपि अंग्रेज़ शासकों ने उर्दू को सरकारी भाषा स्वीकार कर लिया था, और उनका कार्य अंग्रेज़ी तथा उर्दू से ठीक चल रहा था तथापि साम्राज्य की स्थापना के साथ ही उन्हें व्यवहार की दृष्टि से देशी भाषाएँ सीखने की भी आवश्यकता प्रतीत हुई। फलस्वरूप कलकत्ते के फ़ोर्ट विलियम कालेज के अध्यक्ष जान गिल क्राइस्ट ने देशी भाषा की पुस्तकें तैयार कराने की योजना की उनके आदेश से संवत् १८६० में लल्लू लाल ने 'प्रेम सागर'

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

और सदलमिश्र ने 'नासिकेतोपाख्यान' खड़ी बोली-गद्य में रचना की। इनके पहले इंशाअल्लाखां ने 'रानी केतकी की कहानी' ठेठ खड़ी बोली-गद्य में लिख चुके थे। अनन्तर ईसाई धर्म-प्रचारकों ने बाइबिल का अनुवाद तथा खण्डन मण्डनात्मक पुस्तकें तथा पाठ्य पुस्तकें हिन्दी-गद्य में तैयार करवाईं। पाठ्यविषयों में से उस समय आगरे की 'स्कूल बुक्स सोसाइटी' ने भूगोल, रसायन आदि की कुछ पुस्तकें प्रकाशित कीं। जब ईसाई लोग बड़ी तेज़ी से धर्म प्रचार कर रहे थे तब इनका विरोध तथा प्रतिरोध करने के लिये दूसरे लोग भी उठने लगे और परस्पर संघर्ष से धार्मिक जागृति हुई। स्वामीदयानन्द ने आर्यधर्म का महत्व स्थापित करने के लिये 'आर्यसमाज' की स्थापना की। उन्होंने अपने समाज के नाम से हिन्दी को 'आर्य-भाषा' का नाम देकर उसी में अपनी 'सत्यार्थ-प्रकाश' 'संस्कार-विधि' आदि ग्रन्थ लिखे तथा खण्डन-मण्डन आदि में सर्वत्र आर्यसमाजी इसी का व्यवहार करने लगे। आर्यसमाज के प्रभाव से पंजाब जैसे उर्दू प्रधान प्रान्त में भी हिन्दी का प्रचार होने लगा। इस प्रकार एक ओर धार्मिक क्षेत्र में हिन्दी प्रचार पा रही थी, दूसरी ओर शिक्षाक्षेत्र में काशी के राजा शिवप्रशाद सितारेहिन्द और पंजाब के नवीनचन्द्र राय इसका प्रसार कर रहे थे। राजा शिवप्रसाद ने सम्वत् १९१३ में शिक्षा-विभाग में इस्पैक्टर के पद पर नियुक्त होकर उर्दू पक्षपातियों का प्रबल विरोध होते हुये भी हिन्दी की शिक्षा के लिये महान् और सफल प्रयत्न किया।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

स्कूलों में पढ़ाई जाने के लिये स्वयं हिन्दी में पुस्तकें लिखी और अन्य प्रकार से भी इसका हित-साधन किया। यह उर्दू-मिश्रत हिन्दी के पक्षपाती थे और आगरे के राजा लक्ष्मणसिंह शुद्ध हिन्दी के। उन्होंने शुद्ध हिन्दी में कालिदास के शकुन्तला आदि कुछ ग्रन्थों का अनुवाद किया। अनन्तर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी-गद्य को एक व्यवस्थित रूप दिया। परन्तु इस में अभी व्याकरण आदि की दृष्टि से परिमार्जन की आवश्यकता थी और यह काम 'सरस्वती' संपादक के रूप में श्रीमहावीर प्रसाद द्विवेदी ने किया। इन्हीं के उद्योग और प्रोत्साहन से खड़ी बोली में पद्य-रचना भी होने लगी। अब हिन्दी का गद्य-साहित्य, उपन्यास, गल्प, नाटक, वैज्ञानिक व पारिभाषिक पुस्तकों और उच्चकोटि की पत्र-पत्रिकाओं से समृद्ध तथा सुसज्जित हो रहा है। प्रधानत: वर्तमान युग 'गद्य का युग' है। वैसे तो पद्य-साहित्य में भी खड़ी बोली ने थोड़े ही समय में आशातीत उन्नति की है। वर्तमान सुकवियों की कृतियों को देखते हुए खड़ी बोली की कविता का भविष्य अत्यन्त उज्ज्वल प्रतीत होता है। इस प्रकार हिन्दी की वर्तमान सर्वतोमुखी उन्नति, प्रगति और सारे भारत वर्ष में बढ़ते हुए प्रचार को देखते हुए यह निकट भविष्य में 'राष्ट्रभाषा' के गौरवान्वित पद पर आरूढ़ हो जायगी, यह पूर्ण आशा की जाती है।

हम पहले कह चुके हैं कि उर्दू वास्तव में हिन्दी ही थी।

हिन्दुस्तानी

खड़ी बोली और उर्दू के व्याकरण में केवल एक वचन से बहुवचन बनाने के नियमों में कुछ भेद अब पड़ गया है, अन्यथा दोनों का एक ही

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

व्याकरण रहा है और है। उर्दू का लेखक 'मकानों' को मकानात लिखेगा। इस छोटे से भेद के कारण उर्दू को हिन्दी से अलग कोई स्वतन्त्र बोली नहीं माना जाना चाहिए था, लेकिन उसकी लिपि भिन्न होने के कारण उसका हिन्दी से अलग ही स्वतन्त्र विकास होने लगा। उर्दू के लेखक उसमें अधिकाधिक फ़ारसी अरबी के शब्द भरने लगे, एवं उर्दू के साहित्य में अरब और फ़ारस आदि देशों की संस्कृति का प्रवाह बहाने लगे, तब से उर्दू हिन्दी से अधिकाधिक दूर ही होती गई। अब भारत की राष्ट्रीय एकता के लिए प्रयत्नशील नेताओं का ध्यान इन दोनों भाषाओं का भेद कम करके एक मध्य की भाषा 'हिन्दुस्तानी' का प्रचार करने की ओर आकृष्ट हुआ है।

अखिल भारतवर्षीय राष्ट्रीय महासभा (इण्डियन नेशनल कांग्रेस) भी भारतवर्ष में एक राष्ट्रीय भाषा का प्रचार करने का प्रयत्न कर रही है। नए राज्य-विधान के अनुसार अब अनेक प्रांतों का शासन कांग्रेस के हाथों में आ गया है, और वहाँ की सरकारें 'हिन्दुस्तानी' के प्रचार के लिए प्रयत्न करने लगी हैं। अभी हिन्दुस्तानी भाषा में प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए रीडरें तैयार कराई गई हैं। ये रीडरें बिना शब्दों में किसी परिवर्तन के देवनागरी लिपि में हिन्दी के विद्यार्थियों को तथा फ़ारसी लिपि में उर्दू के विद्यार्थियों को पढ़ाई जावेंगी। मदरास में इन रीडरों का प्रचार भी होने लगा है। इन रीडरों के बनाने वालों का दावा है कि इनमें उन्होंने ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जो न हिन्दी से

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

दूर हैं न उर्दू से। वे शब्द साधारण बोल-चाल के हैं।

कांग्रेस के प्रभाव में जिन हिन्दी लेखकों का मस्तिष्क विकसित हुआ है वे भी आजकल ऐसी भाषा लिखते हैं जिन में उर्दू शब्द पर्याप्त संख्या में आते हैं। पं० जवाहरलाल नेहरू की आत्मकथा का जो हिन्दी अनुवाद श्री हरिभाऊ उपाध्याय ने किया है, वह इसका उदाहरण है। इस अनुवाद में ऐसे शब्दों की भरमार है जिन्हें न केवल उर्दू के बल्कि फ़ारसी और अरबी के कहा जा सकता है। इसलिए केवल हिन्दी जानने वालों के लिए उसकी भाषा पराई सी जान पड़ती है।

इसी तरह ऊपर जिन लीडरों का ज़िक्र किया गया है उनकी भाषा भी उर्दू वालों के अधिक निकट तथा हिन्दी वालों के बहुत दूर हैं। ऐसी भाषा को 'हिन्दुस्तानी' के उज्ज्वल उदाहरण नहीं कहा जा सकता। स्वर्गीय मुन्शी 'प्रेमचन्द' की कहानियों में जिस भाषा का प्रयोग हुआ है उसी को हिन्दुस्तानी का यथार्थ रूप कह सकते हैं।

उर्दू के अनेक लेखक और कवि भी हिन्दी के शब्दों का प्रयोग करने लगे हैं, और इन लेखकों की रचनाओं का उर्दू-जगत् में काफ़ी आदर है।

यहाँ उर्दू के प्रतिष्ठित कवि हाफ़िज जालंधरी का एक गीत दिया जाता है, पाठक देखेंगे कि इसकी भाषा हिन्दुस्तानी है।

बंसरी बजाए जा—

कान्ह मुरली वाले नन्दके लाले,

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

बंसरी बजाए जा।
प्रीत में बसी हुई अदाओं से
गीत में बसी हुई सदाओं से
ब्रजवासियों के झोंपड़े बसाए जा
सुनाए जा, सुनाए जा;
कान्ह मुरली वाले, नन्द के लाले
बंसरी बजाए जा!
बंसरी की तान नहीं आग है।
और कोई शय नहीं आग है।
प्रेम की यह आग चार सू लगाए जा।
सुनाए जा, सुनाए जा।
कान्ह मुरली वाले नन्द के लाले
बंसरी बजाए जा!

इस तरह यह देखने में आता है कि जहाँ हिन्दी के लेखकों में उर्दू के शब्दों के प्रयोग करने की प्रवृत्ति जोर पकड़ रही है वहीं उर्दू के लेखकों में भी हिन्दी के शब्दों को इस्तेमाल करने का शौक़ बढ़ रहा है। हिन्दी उर्दू के गंगा यमुनी संगम से हिन्दी भाषा का नवीन रूप बन रहा है।

नागरी लिपि

हिन्दी-भाषी प्रदेशों में देव नागरी के अतिरिक्त उर्दू, कैथी, मुड़िया, मैथिली आदि अनेक लिपियां प्रचलित हैं। हिन्दी न बोलने वाले प्रदेशों में बंगला, गुजराती, तामिल, तेलगू आदि प्रांतीय भाषाओं की अपनी लिपियों का भी अस्तित्व है। भारत में आजकल जितनी लिपियाँ प्रचलित हैं, उनमें उर्दू को छोड़ कर शेष

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सबकी उत्पत्ति प्राचीन ब्राह्मी लिपि से हुई है। ब्राह्मी आर्यों की प्राचीन तम लिपि है। ब्राह्मी की उत्पत्ति के विषय में दो मत हैं। बूहलर तथा वेबर आदि विद्वानों का एक समूह ब्राह्मी का सम्बन्ध पश्चिम एशियाकी किसी विदेशी भाषासे जोड़ता है। मि० बूहलर ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि ब्राह्मी लिपि के २२ अक्षर उत्तरी सेमेटिक लिपियों से लिए गए हैं और बाकी उन्हीं के आधार पर बनाए गए हैं। इसके विपरीत श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का मत है कि यह भारतवर्ष के आर्यों की अपनी खोज से उत्पन्न किया हुआ आविष्कार है। इसकी प्राचीनता और सर्वांग सुन्दरता से चाहे इसका कर्त्ता ब्रह्मा देवता माना जाकर इसका नाम ब्राह्मी पड़ा, चाहे साक्षर समाज ब्राह्मणों की लिपि होने से यह ब्राह्मी कहलाई हो, पर इसमें संदेह नहीं कि इसका फिनी-शियन से कुछ भी सम्बन्ध नहीं। *

दोनों में से कोई भी मत सत्य हो किन्तु यह निर्विवाद है कि ब्राह्मी हा भारत की प्राचीनतम लिपि है और इसका प्रचार सारे भारतवर्ष में रहा है। अशोक के शिला-लेख इसी लिपि में लिखे गए हैं। और इसी लिपि में परिवर्तन होते-होते देवनागरी लिपि बनी है। नागरी देवनागरी का ही संक्षिप्त नाम है।

विक्रम की चौथी शताब्दी के अन्त तक ब्राह्मी लिपि का प्रचार रहा। इस बीच उत्तर भारत की और दक्षिण भारत की

---

* भारतीय प्राचीन लिपिमाला पृष्ठ २८

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ब्राह्मी लिपि में काफ़ी भेद हो गया था। दक्षिण की तामिल, तेलगू, ग्रंथ आदि लिपियाँ ब्राह्मी की दक्षिण शैली से उपन्न हुई हैं। गुप्त साम्राज्य के समय उत्तर भारत की लिपि को गुप्त लिपि कहने लगे थे। गुप्त साम्राज्य के कारण गुप्त लिपि का प्रचार सारे भारत में था इसके उदाहरण गुप्तकालीन शिला-लेखों तथा ताम्र-पत्रादि में मिलते हैं। ओझा जी के मतानुसार गुप्तों के समय में कई अक्षरों की आकृतियाँ नागरी से कुछ कुछ मिलती हुई होने लगीं।❀

गुप्त लिपि के विकसित रूप का नाम कुटिल लिपि पड़ा। कुटिल लिपि से नागरी और काश्मीर की प्राचीन लिपि शारदा विकसित हुई। शारदा से वर्तमान काश्मीरी, टाकरी तथा गुरमुखी लिपियाँ निकलीं। प्राचीन नागरी की पूर्वी शाखा से बंगला निकली। इसी बंगला के परिवर्तित रूप मिथिला, उड़िया तथा नेपाली लिपियाँ हैं। प्राचीन नागरी से ही गुजराती, कैथी तथा महाजनी आदि उत्तर भारत की अन्य लिपियाँ उत्पन्न हुई हैं।

जब से देश में एक जातीयता लाने के लिये भाषा की एकता पैदा करने की ओर नेताओं का ध्यान आकर्षित हुआ तब से इन प्रान्तीय लिपियों के भेद मिटाकर एक नागरी लिपि का प्रचार करने का भी आन्दोलन चल पड़ा है। काका कलेलकर आदि इस दिशा में अच्छा कार्य कर रहे हैं। मराठी भाषा तो पहले से ही नागरी अक्षरों में लिखी जाती है, अन्य प्रान्तीय भाषाओं की

❀ भा० प्रा० लि० पृ० ६०

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

लिपि भी नागरी बना दी जाय इस विषय में काफ़ी चर्चा चल पड़ी है।

नागरी लिपि को सभी प्रान्तीय लिपियों के स्थान पर प्रचलित करने के लिए उसमें कुछ परिवर्तन करने की भी आवश्यकता लोग अनुभव कर रहे हैं। पहले तो अक्षरों की शिरोरेखा उड़ा देने की माँग है। इसके अतिरिक्त और भी परिवर्तन विचारणीय हैं जैसे—

(१) इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ की शक्ल अि, अी, अु, अू, अे, अै कर दिया जाय।

(२) ख में कभी र व का भ्रम होता है। उसकी जगह 'ष' से काम लिया जावे।

(३) ष का काम 'श' से लिया जावे।

(४) ण केवल ण के रूप में लिखा जावे।

(५) ऋ को उड़ा कर रि से काम चलाया जावे।

(६) लृ लॄ को भी उड़ा दिया जावे।

(७) श्री की जगह श्ॎी से काम लिया जावे।

(८) क्ष, त्र, ज्ञ को अलग अक्षर न रखा जावे। इन्हें उन्हीं अक्षरों को जोड़ कर बनाया जावे जिनकी ध्वनियाँ इनमें हैं।

इनके अतिरिक्त और भी कुछ परिवर्तन हैं जिन पर सभी प्रान्तीय भाषाओं के विद्वान् विचार कर रहे हैं।

———

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

काल-विभाजन

साहित्य वह दर्पण है जिसमें मनुष्य, समाज, राष्ट्र और देश के जीवन का प्रतिविम्ब अंकित होता रहता है। जिस समय किसी विशेष देश की सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक प्रवृत्ति जिस प्रकार की होती है, उसी प्रकार का साहित्य उस समय उसमें उत्पन्न होता है। सामाजिक राजनीतिक, और मानसिक परिवर्तनों के साथ ही साहित्य की धारायें परिवर्तित होती रहती हैं।

जब हम हिन्दी के प्राचीन साहित्य से लेकर अब तक की रचनाओं पर दृष्टि डालते हैं तो उसमें काल-क्रम से वीर, भक्ति, रीति, ग्रंथों की प्रमुखता देखते हैं, और वर्तमान युग के साहित्य में नवीन चेतनता, नव जाग्रति, एवं क्रांति के दर्शन होते हैं।

हिन्दी के आदि काल के हिन्दी-साहित्य में वीर-गाथाओं का बाहुल्य है। इसीलिए हिन्दी भाषा का साहित्य लिखने वाले विद्वानों ने इस युग को वीर-गाथा काल का नाम दिया है। यह काल वि० सं० १०००-१३५५ तक माना जाता है। वह बौद्ध धर्म की अहिंसात्मक भावनाओं के विरुद्ध प्रतिक्रिया का युग था, हिंदू राजा परस्पर लड़ते थे या विदेशियों की टक्करें झेलते थे। उस काल के हिन्दी के कवि, भाट, और चारणों ने विशेष राजाओं के आश्रय में रहकर उनका गुण-गान, शौर्य्य-वर्णन किया है। यह नहीं कि उस युग में और किसी प्रकार के साहित्य का

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
सृजन नहीं हुआ। मनुष्य का जीवन किसी भी युग में एकांगी नहीं रह सकता, उसमें भावों की विभिन्नता रहेगी ही, वही अवस्था साहित्य की है। लेकिन विशेष युग में विशेष भाव प्रमुख हो जाता है। इस युग में वीर-रस का ही प्राबल्य था।

समय के साथ देश की राजनीतिक और सामाजिक स्थिति बदली। देश पर मुसलमानों का अधिकार हो गया। सामाजिक वैषम्य और पारस्परिक फूट के कारण हिन्दू-शक्ति क्षीण हो गई। उस निरालम्ब अवस्था में जनता के हृदय ने ईश्वर का अवलम्ब लिया। इस युग में जो साहित्य रचा गया उसमें भक्ति-रस का बाहुल्य है। इसीलिए इस काल को 'भक्ति-काल' कहते हैं। विद्वानों के मतानुसार यह काल विक्रम १३७५ से १७०० तक रहा।

भक्ति के बाद हिन्दी में शृंगार रस का दौरदौरा चला। समय के प्रवाह ने हिन्दू और मुसलमानों को बहुत कुछ एक-रस कर दिया था। इस युग में अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ की छाया में सुख और शांति का लहर बह चली थी। स्वभावतः राजदरबारों में विलासिता बढ़ी और राज्याश्रित कवियों ने शृंगार की बाढ़ लादी। कृष्ण की भक्ति भी शृंगार की यमुना में डूब कर काली हो गई। इस समय तक हिन्दी कविता की कला पूर्णरूप से विकसित हो गई थी। उसमें छन्द, अलंकार, नायिका-भेद आदि की निश्चित परिभाषाएँ हो गई थीं, जिनके

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
अनुसार कवि गण रचनाएँ करते थे। यह रीतिकाल वि० सं० १७०० से १६०० तक रहा।

इसी के पश्चात् वि० सं० १६०० के बाद आधुनिक काल का प्रारम्भ होता है। हिन्दू और मुसलमानी के प्रभुत्व का नाश होकर अंग्रेज़ी राज्य का यहाँ विस्तार हुआ। पश्चिमी साहित्य और सभ्यता के संसर्ग से जनता में नवीन चैतन्य और नवीन स्फूर्ति का आविर्भाव हुआ। प्राचीन परिपाटियों को तोड़कर नवीन प्रवाह में साहित्य भी बह चला। गद्य का विकास भी इसी काल में हुआ। यह युग विविध आन्दोलनों और राष्ट्रीय जागृति का है, इसलिये इस समय में अनेक धाराएँ बहती नज़र आती हैं। जिस प्रकार यह राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्र में क्रांति का युग है उसी प्रकार साहित्य के क्षेत्र में 'क्रांतिकाल' है।

इस तरह साहित्य की रूप रेखा खींचने के लिए हमें उसके अलग-अलग कालों की अलग-अलग तस्वीर बनानी पड़ेगी। ये काल इस तरह हैं:—

१. वीरकाल १०००—१३७५
२. भक्तिकाल १३७५—१७००
३. रीतिकाल १७०० से १६००
४. क्रांति-काल १६०० के बाद

Sri Pratap Singh Library Srinagar
CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

वीर-काल

अपभ्रंश-रचनाएँ

हम पहले बता चुके हैं कि प्राचीन हिन्दी की प्रारम्भिक रचनाएं वीर पुरुषों के शौर्य वर्णन के लिए लिखी गई थीं। वह हिंदू शक्ति का बाहरी शक्तियों के साथ संघर्ष का युग था, उस काल के कवियों ने समय की आवश्यकता पूरी करने के लिए वीर-गाथाएँ लिखी थीं।

वीर-रस की एक निश्चित धारा प्रवाहित होने के पहले भी पुरानी हिंदी में, जो प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं के शब्दों से युक्त थी, नीति शृंगार और धर्म-सम्बन्धी फुटकर रचनाएँ होती रही हैं।

शिवसिंह सरोज में भोज के पूर्वपुरुष राजा मान के सभासद पुष्य नामक बंदीजन द्वारा संवत् ७७० में दोहों में अलंकार ग्रंथ लिखने का उल्लेख है। किंतु वह ग्रंथ अब उपलब्ध नहीं है। संवत ९९० में देवसेन नामक जैन ग्रंथकार ने 'श्रावकाचार' और 'दब्ब सहाव पयास' नामकी पुस्तकें दोहों में लिखीं। योगमार्गी बौद्धों के सहजिया संप्रदायों की कुछ पुरानी पुस्तकों का संग्रह महा-महोपाध्याय श्री हरप्रसाद शास्त्री ने किया है जिसमें कन्ह (कृष्ण) और सरह (सरोजवज्र) के दोहे पुरानी प्राकृताभास हिंदी या अपभ्रंश में है।

वीरकाल का जो साहित्य अब उपलब्ध है उसको भाषा के भेद के कारण दो विभागों में बाँटा जा सकता है। एक

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
विभाग म वे ग्रंथ आते हैं जो अपभ्रंश के काव्य कहे जा सकते हैं और दूसरे में वे जो देश-भाषा के। अपभ्रंश काव्य वे हैं जो उस समय की बोलचाल की भाषा में न होकर प्राकृत और अपभ्रंश में हैं, देश भाषा के काव्य वे हैं जो प्राकृत और अपभ्रंश की रूढ़ियों से बहुत कुछ मुक्त हैं, यद्यपि सर्वथा मुक्त तो वे भी नहीं हैं।

इस काल में अपभ्रंश भाषा की कविताओं का नमूना उपस्थित करने वालों में जैनाचार्य हेमचन्द्र, जैन पण्डित सोमप्रभ सूरी, जैनाचार्य मेरुतुङ्ग, नल्लसिंह भट्ट और शार्ङ्गधर के नाम उल्लेखनीय हैं। हेमचन्द्र के 'सिद्ध हेमचन्द्र शब्दानुशासन' नामक संस्कृत प्राकृत और अपभ्रंश के व्याकरण में अपभ्रंश दोहे उद्धृत किए गये हैं जो अधिकांश में उनके समय से पहले के रचे हुए हैं। सोम प्रभ सूरी के 'कुमारपाल चरित' नामक प्राकृत ग्रन्थ में अपभ्रंश के पद्य हैं। जैनाचार्य मेरुतुङ्ग के 'प्रबन्धक चिन्तामणि' नामक संस्कृत ग्रन्थ में अपभ्रंश के दोहे उद्धृत हैं। ये भी उनकी अपनी रचना नहीं, उनसे पहले के बनाए हुये हैं।

अपभ्रंश में मौलिक और क्रमबद्ध काव्य-ग्रन्थ लिखने का श्रेय नल्लसिंह भट्ट और शार्ङ्गधर को प्राप्त हैं। नल्लसिंह भट्ट का एक ग्रन्थ 'विजयपाल रासो' प्राप्त हुआ है।

विजयपाल रासो

सम्वत् १०९३ में विजयपाल राजा ने जो युद्ध किए उनका का इस ग्रन्थमें वर्णन है। इस ग्रन्थ में काव्य के गुणों का पर्याप्त उत्कर्ष मिलता है। नल्लसिंह सं० १३५८ में जीवित थे। इनकी कविता का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

हुकुम होत चढ़चले तोप नीशान वाद्य सज,
स्यंदन पैदल तुरिय नाग चिक्करत नन्द गज।
पव्यय होत पिसान मंड मंडल रज मण्डिय,
भजत शत्रु तज अस्त्र आश जीवन की छंडिय।
दरसे न भानु कवि नल्ल कहे सर, सरिता सुखात जल,
जादव नरेश विजयपाल के जिहि दिशान को बढ़त दल।

इसी काल का दूसरा अपभ्रंश काव्य शार्ङ्गधर का हम्मीर रासो सुना जाता है। शार्ङ्गधर के ग्रंथों का रचना-काल १४ वीं शताब्दी के अन्तिम चरण में माना जाता है। इन्होंने 'शार्ङ्गधर पद्धति' नामक सुभाषित संग्रह भी बनाया है, जिसमें देश-भाषा के छंद भी आये हैं। जो दूसरों के रचे हुए हैं। किंतु 'हम्मीर रासो' नामक एक वीर-गाथा-काव्य इनकी अपनी रचना है। यह ग्रंथ उपलब्ध नहीं है। उसके कुछ छन्द मिलते हैं, जिसमें से एक नीचे दिया जाता है।

ढोला मारिय ढिल्लि महँ मुच्छिउ मेच्छ शरीर।
पुर जज्जल्ला मंतिवर चलिश्र बीर हम्मीर॥
चलिवां बीर हम्मीर पाअभर मेहाणि कंपई।
दिगगण अन्धार धूलि सुराह आच्छाइहि॥
दिगमग णह अन्धार आण खुरसाणुक उल्ला।
दरह मरि विपक्क मारु दिल्ली यह ढोल्ला॥ ×

× दिल्ली में ढोल बजाया गया, म्लेच्छों के शरीर मूर्छित। हुए आगे मन्त्रिवर जज्जल को कर के वीर हम्मीर चले। चरणों के भार से पृथ्वी

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अपभ्रंश में काव्य-रचना करने की परिपाटी यहीं समाप्त हो गई। केवल विद्यापति ने इसके पचास-साठ वर्ष बाद 'कीर्तिलता' और 'कीर्ति-पताका' नामक ग्रन्थों की रचना अपभ्रंश में की हैं। किंतु विद्यापति की ख्याति उनकी पदावली के कारण अधिक है और वह मागधी भाषा में है। यहाँ कीर्तिलता से उनकी अपभ्रंश रचना का नमूना दिया जाता है।

पुरि सत्ते ण्णेन पुरिसओ नहिं पुरिसओ जन्मत्तेन,
जल दानेन हुजलओ नहुजलओ पुंजियो धूमो।
सोपुरि सो जसु मानो सो पुरिसो जस्स अज्जने सत्ति,
पुरिस काहानी हओ जसु पत्थाने पुण्ण,
सुक्ख सुभोअन सुभवन अन देवेहा जाइ लपुन्न।
पुरुस हुअउँ बलिराए जासु करे कन्ने पसारिअ,
पुरिस हुअउँ रघुतनअ जेन्ने बले रावण मारिअ।
पुरिस भगीरथ हुअऊँ जेन्ने निज कुल उद्धरिऊँ,
परसुराम अरु पुरिस जेन्ने खत्तिय खअउ करिअउँ।
अरि पुरिस पसंसओ राम-गुरु कित्तिसिंह गएणेपुसुअ,
जो सत्तु समर सम्महिकहु वधवैर उद्धरिअ धुअ। *

कांपती है। दिशाओं के मार्गों और आकाश में अँधेरा हो गया है। धूल सूर्य के रथ को आच्छादित करती है। ओज में खुरासाकी ले आये। विपत्तियों को दलमल कर दबाया। दिल्ली में ढोला बजाया।

* पुरुषत्व से पुरुष (होता है), जल मात्र से पुरुष नहीं होता। जल-दान से जलद (है) पूंजीकृत धूम जलद नहीं। वही पुरुष (है)

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अपभ्रंश की रचनाओं को देखने से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि इनकी भाषा प्राकृत की रूढ़ियों से बँधी हुई थी। बोलचाल के साधारण तत्सम शब्द जैसे उपकार, नगर, वचन आदि के स्थान पर उआर नअर, वअण जैसे शब्द प्रयोग में लाये जाते थे। किंतु धीरे-धीरे काव्य-भाषा का झुकाव देश-भाषा (बोल-चाल की भाषा) की ओर होता गया है। इसका प्रमाण नल्लसिंह की विजयपाल रासो, शार्ङ्गधर के हम्मीर रासो और विद्यापति के कीर्तिलता काव्यों में मिलता है।

जिसका मान (है) वही पुरुष जिसकी अर्जन में (अर्थात् कमाने की) शक्ति (है) इतर पुरुष के आकार में पुच्छ विहीन पशु हैं। (उस) पुरुष की कथा ही कथा है जिसके प्रस्ताव से पुण्य (होता है) सुख, अच्छा भोजन (प्राप्त होता है), मिष्ट वचन (सुनने में आता है), (और) पुण्य युक्त (होकर) देवलोक को जाया जाता है। बलिराजा पुरुष थे, जिनके दान की कथा सुनने के लिये कान पसारे जाते हैं। रामचन्द्र पुरुष थे जिन्होंने बल से रावण को मारा पुरुष हुए थे भगीरथ जिन्होंने निज कुल उद्धारा और परशुराम पुरुष थे जिन्होंने क्षत्रियों का क्षय किया। और प्रशंसा करता हूँ (एक) पुरुष की (जो) गजेन्द्र के पुत्र राजगुरु कीर्ति सिंह (थे) जिन्होंने समर (में) शत्रु का मर्दन कर पितृ-वैर का निश्चय उद्धार किया।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

वीर काल

देश भाषा के काव्य

पिछले अध्याय में वीर काल के अपभ्रंश ग्रन्थों की चर्चा की गई हैं। नल्लसिंह भट्ट का विजयपाल रासो, शार्ङ्गधर के हम्मीर रासो, और इसके बहुत बाद में लिखे विद्यापति के कीर्तिलता ग्रन्थ वीर गाथा काल की प्रचलित परिपाटी के अनुकूल हैं। ये ग्रन्थ विशेष वीर पुरुषों के शौर्य्य और ऐश्वर्य वर्णन में लिखे गये हैं। धीरे-धीरे अपभ्रंश भाषा का साहित्य से स्थान स्खलित होता गया और उसका स्थान देश भाषाओं ने, अर्थात् बोलचाल की भाषाओं ने लेना प्रारम्भ कर दिया।

वास्तव में देखा जावे तो यहीं से हिन्दी साहित्य के इतिहास का प्रारम्भ होता है। महाराज हर्षवर्द्धन की मृत्यु सम्वत ७०४ के पश्चात् भारतवर्ष का साम्राज्य टुकड़े-टुकड़े हो गया। गहरवार, चौहान, चन्देल और परिहार आदि पश्चिम की ओर बसे हुए राजपूत राज्य काफ़ी शक्तिशाली और प्रभावशील थे। ये या तो परस्पर युद्ध करते थे अथवा विदेशियों से टक्कर लेते थे। इन राज्यों के आश्रित कवियों ने इनके जीवन वर्तांत काव्यों में लिखे हैं।

ये काव्य दो प्रकार के होते थे, एक तो प्रबन्ध काव्य, दूसरे मुक्तक। प्रबन्ध काव्यों में किसी विशेष वीर पुरुष का सम्पूर्ण जीवन-वृत्त अथवा उनके जीवन की विशेष महत्वपूर्ण घटना का या कुछ घटनाओं का क्रमबद्ध वर्णन होता था, और मुक्तक में उसके

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ऐश्वर्य और वीरता का वर्णन फुटकर छन्दों में किया जाता था। वह क्रमबद्ध काव्य नहीं होते थे।

उस काल के जिन प्रमुख सुकवियों के वीर-रस के काव्य ग्रन्थ किसी रूप में अभी तक बचे रह सके हैं, उनके नाम (१) दलपत विजय (२) नरपति नाल्ह (३) चन्दवरदाई (४) जल्हन (५) भट्ट केदार (६) मधुकर (७) जगनिक हैं।

दलपत विजय

चित्तौड़ के अधिपति खुमान द्वितीय (सम्वत् ८७० से ६००) के नाम पर इस पुस्तक का नाम करण हुआ है। सम्वत् ८७० विक्रम में बग़दाद के ख़लीफ़ा अल-मायूं ने भारत पर चढ़ाई की थी। सुनते हैं चित्तौड़ के रावल खुमान द्वितीय ने उसे २४ युद्धों में परास्त कर भारतवर्ष से निकाल दिया था। इस ग्रन्थ में इन्हीं युद्धों का वर्णन है। आजकल खुमान रासो की जो प्रति मिलती है उसमें महाराणा प्रताप तक का हाल है। जान पड़ता है इसमें बहुत सा भाग बाद में अन्य कवि या कवियों ने मिला दिया है।

नरपति नाल्ह

नरपति नाल्ह का 'वीसलदेव रासो' नामक मुक्तक गीतों का ग्रन्थ प्रसिद्ध है। इसका रचना काल १२१२ विक्रम सम्वत् है। यह काव्य लगभग २००० चरणों का है। नरपति नाल्ह चौहान राजा वीसल देव के आश्रित कवि थे। इस ग्रन्थ में उन्होंने वीसलदेव की प्रेम कहानी कही है। यह ग्रन्थ प्रेम-प्रधान है। वीसलदेव बड़े वीर पुरुष

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

थे, उन्होंने कई बार मुसलमानों पर चढ़ाई कर उन्हें पराजित किया। इसलिए इसे वीर-गाथाओं में स्थान मिला है। इसकी भाषा में अन्य लोगों ने बाद में फेर फार कर दिए हैं।

चन्दबरदाई

चन्दबरदाई हिन्दी के प्रथम महाकवि माने जाते हैं। इनका जन्म लाहौर में हुआ था, कुछ विद्वान इन्हें दिल्ली के प्रसिद्ध ऐतिहासिक वीर पुरुष सम्राट पृथ्वीराज के समकालीन, उनके मन्त्री और राजकवि बतलाते हैं, तथा कई माने हुए विद्वान् इन्हें उनके बहुत बाद के।

इनका 'पृथ्वीराज रासो' नाम का महाकाव्य २००० पृष्ठों का वृहद्-ग्रंथ है। इस ग्रंथ में प्राचीन समय के प्रायः सभी प्रचलित छन्दों का प्रयोग किया हैं। १६वीं सदी में महाराजा अमरसिंह ने इसके बिखरे हुए छन्दों को एकत्रित कराकर वर्तमान काल में जो रूप इसका प्रचलित है वह रूप दिया।

इस ग्रंथ में चौहानों की उत्पत्ति से लेकर पृथ्वीराज का कन्नौज के जयचन्द के साथ विग्रह, संयोगिता और पृथ्वीराज की प्रेम कथा और शहाबुद्दीन गौरी से युद्धों, और पृथ्वीराज की मृत्यु तक का वर्णन है।

इसमें सन्देह नहीं कि इस पुस्तक में बहुत सा अंश बाद का जोड़ा हुआ है। पृथ्वीराज रासो' की तारीखें ऐतिहासिक तारीखों से मेल नहीं खातीं, इसलिये चन्द को पृथ्वीराज का समकालीन कवि मानने में अनेक इतिहास वेत्ता हिचकते हैं। श्री गौरीशङ्कर हीरा-चन्द ओझा ने तो इस ग्रंथ को सर्वथा जाली सिद्ध किया है। वह

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अपनी धारणा की पुष्टि में तीन प्रमाण देते हैं। पहला यह कि रासो की तारीखें ऐतिहासिक तारीखों से भिन्न हैं, दूसरा यह कि इसमें अनेक इतिहास विरुद्ध घटनाएँ भरी पड़ी हैं, तीसरी बात यह है कि इसकी भाषा में फ़ारसी के शब्द भी बहुत आए हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से इस ग्रंथ और चन्द कवि के विषय में अनेक मतभेद हैं, फ़िर भी इस ग्रन्थ का साहित्यिक महत्व कम नहीं होता। यह हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है। इस ग्रंथ में वीर रस की प्रधानता है साथ ही श्रृङ्गार-रस भी तरंगित हो रहा है। भाषा-सौष्ठव, वर्णन की मनोरंजकता, ओजपूर्ण शैली, छन्दों की विभिन्नता और विषयों की विविधता एक ही स्थान पर दिखाई देती है। चन्द बहुगुण सम्पन्न सफल कलाकार और वीर पुरुष थे, इस विषय में ज़रा भी सन्देह नहीं। रासो का एक छन्द यहां दिया जाता है।

छर्पा सेन सुरतान, मुट्ठि छुट्टि चावद्दिसि।
मनु कपाट उद्धरयो, कुह फुट्टिय दिसि विद्दिसि।
मार-मार मुख किन्न, लिन्न चावण्ड उपारे।
परे सेन सुरतान, जाम इक्कह परिधारे।
गज वत्थ धत्त गाढ़ो ग्रहौ, जानि सनेही भिटयौ
चामण्डराई करिवर कहर, गौरी दब्बल कुट्टयौ॥ §

---

§ सुलतान की सेना तृत हो गई, चारों दिशाओं में मूठ छूट गई और चारों तरफ चामण्डराव ने मारना आरम्भ कर दिया। इससे इति कर्तव्यता विमूढ़ हो गई। दिशा दिशाओं में ऐसी कुहू पड़ी कि मानो

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

यह चन्दबरदाई का पुत्र था। इसने पृथ्वीराज रासो के अंतिम भाग को पूर्ण किया है। चन्द की

जल्हन

वर्णन शैली को इसने खूब निभाया। इसका कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ उपलब्ध नहीं; शायद लिखा ही न हो।

जिस प्रकार पृथ्वीराज के यश का वर्णन चन्द बरदाई ने किया। केदार ने 'जयचन्द-प्रकाश' तथा मधुकर

केदार तथा मधुकर

ने 'जय-मयंक जस-चन्द्रिका' नामक ग्रन्थ लिख कर पृथ्वीराज के प्रतिद्वन्दी कन्नौज के महाराजा जयचन्द की कीर्ति गाई है। कन्नौज का राज्य किसी भी तरह पृथ्वीराज के राज्य से कम समृद्ध और सम्पन्न न था। समस्त राजपूताने, बुंदेलखण्ड आदि राजस्थानी क्षेत्र में पृथ्वीराज और जयचन्द के नाम पर दो दल हो गए थे। इन दोनों दलों में सदा लोहा बजता था। उपर्युक्त दोनों काव्यों में जयचन्द की वीरता का वर्णन किया गया था, किन्तु अब ये ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं। इनके आधार पर सिंधामल के दयालदास ने "राढोरांरी ख्याति" लिखी है।

केवाड़ा की चीत्कार हो। चामण्डराव मुँह से मार मार करता था और मस्तकों को काटता जाता था। मिलते ही गलवस्त्र को ऐसा पकड़ता कि मानों कोई बड़ा स्नेही मिला हो। चामण्डराय रूपी हाथी ने गौरी की सेना में कहर मचा दी।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ये कालिंजर के राजा परमाल के आश्रित कवि थे। इन्होंने आल्हखण्ड नाम के काव्य-ग्रंथ में महोबे के प्रसिद्ध वीर आल्हा-ऊदल के अन्य राजाओं से हुए युद्धों का बड़ा सजीव वर्णन लिखा है। राजा परमाल तथा आल्हा-ऊदल भी पृथ्वीराज के काल में हुए हैं। ये पृथ्वीराज के विरुद्ध जयचन्द के समर्थक थे।

जगनिक

आजकल जो आल्हखण्ड मिलता है वह जगनिक के मूल ग्रन्थ से बहुत भिन्न है। यह गीत काव्य था, और सर्वसाधारण में सदा से गाया जाता रहा है, इसलिए समय के प्रभाव से जो भाषा में परिवर्तन होते गए वे इस ग्रन्थ में भी होते रहे। आज के आल्हखण्ड की भाषा वह प्राचीन भाषा नहीं रही। भाषा के बदल जाने पर भी काव्य की आत्मा वही है। आज भी उसे सुन कर सर्वसाधारण में वीर-रस का प्रवाह उमड़ आता है। आज भी लोग बड़े जोश से गाते हैं।

> बारह बरिस लै कूकर जीएँ और तेरह लौं जिएँ सियार।
> बरिस अठारह छत्री जीएँ, आगे जीवन को धिक्कार॥

आरम्भिक काल की ये वीर-रस पूर्ण पुस्तकें हिन्दी-साहित्य की अमूल्य निधि हैं। आल्हखण्ड को छोड़ कर, जिसकी भाषा ने समय के साथ अपना चोला बदल लिया है, अन्य ग्रंथों की भाषा इस युग में समझ में नहीं आतीं। इन ग्रंथों में राजस्थानी हिंदी-पिंगल और डिंगल तथा अपभ्रंश और प्राकृत के शब्द और व्याकरण का समावेश है। आज की हिंदी से ये बहुत दूर

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

पड़ गई हैं, फिर भी इनका राजनैतिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक महत्व कम नहीं है। इन पुस्तकों से भारत की प्राचीन सभ्यता गौरव, और वीरता का परिचय मिलता है।

वीर काल

अन्य कवि

वीरकाल में जो वीर गाथाएँ काव्य में लिखी गईं उनकी चर्चा पिछले परिच्छेद में की जा चुकी है। किसी भी युग में सर्वथा एक ही प्रकार का, एक ही रस का या एक ही परिपाटी का साहित्य-सृजन नहीं होता। एक ही कवि भी अपने जीवन काल में विभिन्न विषयों, शैलियों और रसों का स्वाद रसिकों को चखाता है। इसलिये वीर-काल में भी ऐसी रचनाएँ हुई हैं जो उस युग की विशेष धारा वीर-रस से पृथक हैं।

भाषा, शैली और विषय की भिन्नता के कारण इस युग के वीर गाथाएँ लिखने वाले कवियों से अमीर खुसरो सर्वथा अलग हैं। अमीर खुसरो का सं० १३१२ में जन्म और १३८१ में मृत्यु हुई थी। ये न केवल हिंदी के कवि थे, बल्कि इन्होंने फ़ारसी में भी पुस्तकें लिखी हैं। ये सङ्गीत के भी न केवल रसिक थे बल्कि स्वयं उस कला में निपुण थे। इन्होंने, सुनते हैं कविता की ९९ पुस्तकें लिखी थीं, जिनमें केवल बीस-बाईस मिलती हैं।

अमीर खुसरो

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अमीर खुसरो मुसलमान थे, किन्तु इन्होंने उस समय की बोल-चाल की हिन्दी में रचना की है। इनकी हिंदी रचनाओं से यह ज्ञात होता है कि उस समय की साधारण बोल-चाल की भाषा और साहित्यिक भाषा में अन्तर था। चन्द आदि की भाषा उस समय की साहित्यक भाषा थी, किन्तु अमीर खुसरो को साधारण बोल-चाल की भाषा में लिखना सरल जान पड़ा। उनकी कविता की भाषा वर्तमान खड़ी बोली से बहुत मिलती जुलती है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि खड़ी बोली का उद्-गम न तो उर्दू से हुआ है, न ब्रजभाषा से। इस काल में न तो उर्दू का जन्म हुआ था, न ब्रजभाषा का। किंतु खड़ी बोली का प्रारम्भिक रूप उस समय भी था।

इन्होंने हिंदी कविता में मुकरनी और पहेलियाँ लिखी हैं, जो बहुत प्रचलित हुई हैं। उदाहरण—

आदि कटे तो सब को पारै।
मध्य कटे तो सब को मारै॥
अन्त कटे तै सब को मीठा।
कह खुसरो मैं आँखों दीठा॥

जिस प्रकार अमीर खुसरो की रचनाएँ भाषा और विषय दोनों में उस काल के कवियों से भिन्न हैं उसी प्रकार विद्यापति की रचनाएँ भी। विद्यापति की एक पुस्तक 'कीर्ति लता' की चर्चा हम अपभ्रंश की रचनाओं के साथ कर चुके हैं, किंतु उनकी अधिक प्रसिद्धि

विद्यापति

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अपने प्रांत की बोल-चाल की भाषा में लिखी रचनाओं के कारण हैं। खुसरो की भाषा पश्चिम की बोल-चाल की भाषा है, तथा विद्यापति की पूर्व की मैथिली। बंगाली लोग उन्हें बंगाली का कवि मानते हैं, किंतु हिंदी वाले हिंदी का। इनकी पदावली बहुत लोक-प्रिय है। इनकी कविता में शृङ्गार के पद ही अधिक हैं और अनेक पदों में राधाकृष्ण के गुण-गान हैं। इनके पद काव्य-कला, भाषा-माधुर्य्य की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट है। उदाहरण—

हातक दरपण माथक फूल।
नयनक अञ्जन मुखक ताम्बूल॥
हृदयक मृगमद गीमक हार।
देहक अरबस गेहक सार॥
पाखीक पाख मीनक पानी।
जीवक-जीवन हम तुहु जानी॥
तुहु कैसे माधव कह तुहु मोय।
विद्यापति कह दुहुं दोहों होय॥*

---

*हे माधव, तुम्हें मैं हाथ का दर्पण, मस्तक का फूल, नेत्रों का अंजन और मुख का ताम्बूल समझती हूँ। तुम मेरे हृदय की कस्तूरी, गले के हार, शरीर के जीव और घर की निधि हो। पक्षी के लिए पंख और मछली के लिये जल अनिवार्य होता है, उसी तरह तुम मुझे किस रूप में समझते हो? विद्यापति कहते हैं कि वे दोनों ही परस्पर एक दूसरे की दृष्टि में वैसे ही हैं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

खुसरो और विद्यापति समाज की बदलती हुई प्रवृत्ति के द्योतक हैं। यद्यपि इन्होंने उसी काल में रचना की जिसमें वीर-गाथाएँ लिखी गई थीं। किंतु जैसे-जैसे विदेशियों के पैर यहाँ जम गए, राजपूत राजाओं की गौरव गाथाएँ मन्द पड़ गईं, उनकी वीर गाथाओं के लिखने का क्रम भी रुकने लगा, और समाज भक्ति-रस में डूब कर भगवान का आश्रय लेने लगा।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

भक्ति-काल

प्रमुख धाराएँ

यह तो खुसरो और विद्यापति की रचनाओं से ही विदित हो चुका है कि विक्रम की १४वीं शताब्दी में हिन्दी के साहित्य ने अपना रुख पलटना प्रारम्भ कर दिया था। अब वह केवल वीर पुरुषों के गुण-गानों तक ही सीमित नहीं रहा। अब उसने जनता के हृदय को भी छूना प्रारम्भ किया।

इस समय तक हिन्दुओं के अधिकांश राज्य नष्ट हो चुके थे, उनके स्थान पर विभिन्न मुस्लिम राज्य स्थापित हो गए, कवियों, चारणों और भाटों द्वारा हिंदुओं को जो उत्साह प्रदान किया जाता रहा, उसके बावजूद भी पारस्परिक फूट के कारण राजपूत भारतवर्ष की स्वतन्त्रताको कायम रखनेमें समर्थ न होसके। राजपूतोंकी शक्ति क्षीण हो जाने से उनमें पहले के पृथ्वीराज,जयचन्द आल्हा, ऊदल, हम्मीर जैसे वीर पुरुषों के समान शौर्य प्रदर्शित करने वाले पुरुषों का अभाव दृष्टिगत होने लगा, इसलिए उस प्रकार की वीर गाथाओं का अब अन्त हो गया। जो शेष हिन्दू राज्य रह गए उनके दरबारों में चारण और भाट अथवा आश्रित कवि रहते तो थे, किन्तु उनकी रचनाएँ न पहले जैसी जीवन-दायिनी थीं, न साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण। वह उन दरबारों की सीमा के बाहर न निकल सकीं, और समाप्त हो गईं।

चार-पांच सौ वर्ष की मार-काट के अशान्ति पूर्ण वातावरण

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

से जनता का हृदय ऊब चुका था.इसलिए अब ईश्वर-भक्ति में उसने शान्ति की खोज की। ईश्वर-भक्ति की विभिन्न धाराओं में सर्व-साधारण अपने सुख-दुख को लीन करने लगे। उस समय के जो धर्म-ग्रन्थ एवं काव्य मिलते हैं उनको देखने से भक्ति की दो धाराओं का प्रचार उस समय होना पाया जाता है।

१. सगुणोपासना।

२. निर्गुण-साधना।

सगुणोपासना में भी दो धाराएँ थीं।

(१) कृष्ण-भक्ति धारा।

(२) राम-भक्ति की धारा।

निर्गुण साधना में भी दो धाराएँ थीं।

(१) ज्ञानमार्गी

(२) प्रेम-मार्गी

सगुणोपासना का आधार दक्षिण के रामानुजाचार्य, तथा गुजरात के माध्वाचार्य आदि के चलाए हुये मत थे। उत्तर या मध्यभारत में रामानुजाचार्य के सम्प्रदाय में स्वामी रामानन्द जी हुए जिन्होंने राम की उपासना का प्रचार किया, इसी समय वल्लभाचार्य ने कृष्णोपासना की परम्परा चलाई। बंगाल के चैतन्य महाप्रभु ने भी बंगाल में श्रीकृष्ण की भक्ति की धारा बहाई।

इस समय देश में न केवल हिन्दू और मुसलमानों के हृदय एक दूसरे के प्रति खिंचे हुए थे, बल्कि छूत-छात के भावों से हिन्दू जाति भी टुकड़े-टुकड़े हो रही थी। इसलिए उस समय के सन्त

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

कवियों ने निर्गुण ब्रह्म की उपासना के क्षेत्र में हिन्दू, मुसलमानों और अछूतों को लाकर बैठाने का प्रयत्न किया। दक्षिण के नामदेव ने, बंगाल के श्री चैतन्य महाप्रभु ने, तथा रामानन्द जी ने भी मनुष्य मात्र का ईश्वर-भक्ति के लिए समान अधिकारी माना है। किन्तु, चूंकि ये सगुणोपासक थे, और ये मूर्ति की सेवा करने के अधिकार सब को समान दिलाने में समर्थ न हो सके। इसीलिए कबीर आदि सन्त कवियों ने मूर्ति, मन्दिर, मस्जिद की कोई आवश्यकता नहीं समझी। उन्होंने एक अरूप, अमूर्त, निर्गुण ब्रह्म की उपासना में जनता को लगाने का उद्योग किया। इन सन्त कवियों ने हिन्दुओं और मुसलमानों के हृदय से साम्प्रदायिकता का विष दूर कर एक ही ईश्वर एक ही खुदा की औलाद बताकर गंगा यमुना की भांति मिलाकर एक राष्ट्रीयता का प्रयाग बसाने का उद्योग किया। न केवल एक राष्ट्रीयता बल्कि एक मानवता का पुण्य तीर्थ बसाना चाहा।

इन निर्गुणियों में भी दो धाराएँ हैं। एक ज्ञान धारा, दूसरी प्रेम-धारा। ज्ञान-धारा अद्वैतवादी शंकराचार्य के धार्मिक सिद्धान्त को लेकर आगे बढ़ी है। किन्तु प्रेम-धारा के कवियों पर मुसलमान सूफ़ी सन्तों के विचारों का प्रभाव है। उन्होंने प्रियतम' में परमेश्वर की छाया देखकर उसे खुदा की तरह माना है। अन्त में प्रियतम और प्रेमी की एक रूपता का समर्थन किया है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

भक्ति-काल

ज्ञान-मार्ग-धारा

ज्ञान-मार्गी सन्त कवियों ने हिन्दू, मुसलमान, छूत-अछूत की धार्मिक और सामाजिक बाधाओं को लांघ कर एक मानव-धर्म का प्रतिपादन किया था। इन सन्त कवियों ने कविता-कामिनी को वीर पुरुषों की गाथाओं, या मनुष्यों के लौकिक सुख-दुःख प्रेम-अप्रेम के गीत गाने वाली गायिका के पद से ऊंचा उठ कर उस अलौकिक, निगु‍ण, जाति और धर्म के परे रहने वाले प्रियमत के छवि-गान गाने वाली साधिका बनाया।

साहित्य में इस धारा के प्रवर्तक महात्मा कबीर माने जाते हैं।

कबीर

जिस प्रकार इनकी कविता रहस्यवादी है, इसी प्रकार उनकी जीवनी भी रहस्यों से भरी हुई है। इनका जन्म सम्वत १४५६ में माना जाता है। सुनते हैं उनका जन्म एक विधवा से हुआ था, जिसने इन्हें काशी के लहरतारा तालाब के पास छोड़ दिया। वहाँ से नीरू नामक जुलाहा उन्हें उठा लाया और पालन-पोषण करने लगा। गोत्र, कुल-हीन बालक ने बड़े होकर अध्यात्म तत्व का वह तम्बूरा बजाया जिसके नाद से न केवल हिन्दी बल्कि संपूर्ण भारत और संसार गूंज उठा।

ये अपने आपको रामानन्द जी का शिष्य बताते हैं। कबीर पन्थ में जो मुसलमान हैं वे इन्हें सूफ़ी मुसलमान फकीर तकी का शार्गिद कहते हैं। लेकिन उनकी रचनाओं को देखने से

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
इस कथन की सत्यता पुष्ट नहीं होती। इसमें सन्देह नहीं कि कबीर ने उस समय के प्रचलित हिन्दू धर्म के मूर्तिपूजा और अवतारवाद के सिद्धान्तों का खण्डन किया है। फिर भी उनकी कविताओं के प्राणों में अधिकांश रूप से हिन्दू धर्म ही प्रवाहित हो रहा है। माया, जीव, ब्रह्म, तत्वमसि, त्रिकुटी, छः रिपु आदि शब्द सब हिन्दू तत्व-ज्ञान के हैं, जिनका प्रयोग कबीर ने बहुलता से किया है।

कबीर बहुत पढ़े-लिखे नहीं थे। उनका ज्ञान, साधना और सत्संग का परिणाम था। उनके अधिक पण्डित न होने का परिणाम यह हुआ कि उन्होंने सर्वसाधारण की भाषा में रचना की और उनकी रचनाओं का प्रचार भी खूब हुआ। यद्यपि वे विद्वान नहीं थे, फिर भी उनकी साधना अनुभूति और प्रतिभा अप्रतिम थी। उन्होंने बिना यह जाने हुए कि काव्यकला क्या होती है, रहस्यवाद क्या होता है, जो रचनाएं की हैं उन्हें साहित्य में बहुत ऊंचा स्थान मिला है, तथा वे कवि सम्राट रवीन्द्रनाथ जैसे महापुरुषों को भी प्रभावित करने वाली रहस्यवादी भावनाएँ सिद्ध हुई हैं।

हिन्दुओं के विशिष्ठ अद्वैतवाद की नीरसता को कबीर ने सूफियों के प्रेम तत्व से सरस बनाया। कबीर की रचनाएँ कहती हैं कि जीव और परमात्मा सदा भिन्न भी हैं और मिले हुए भी। उन्होंने परमात्मा और जीव की प्रियतम, प्रियतमा के रूप में कल्पना करके दर्शन के नीरस विषय को अत्यन्त सरस और सरल बनाया है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों दोनों के रूढ़िवाद की निन्दा की है। कबीर के जीवन-काल में धर्मान्ध हिंदू और मुसलमान दोनों ही उनसे नाराज़ थे, और उन पर अनेक प्रकार की विपत्तियां आईं, लेकिन धर्म के ठेकेदारों से सताये हुए दलितों में इनका प्रभाव बढ़ता ही गया।

कबीर ने अपनी रचनाओं में मानव-धर्म के चिरंतन सत्य कहे हैं। उनकी रचनाएं प्रत्येक काल और देश के लिए समान हैं।

जिस प्रकार कबीर ने भावनाओं में क्रांति की उसी भांति भाषा में भी। उनकी भाषा खड़ी बोली, अवधी, पूर्वी, ब्रजभाषा आदि अनेक बोलियों का मिश्रण है। अनुभूति की गहराई और भावों की सरलता के कारण इनकी रचना काफी चमत्कारपूर्ण हो गई है इनकी रचनाओं का संग्रह 'बीजक' के नाम से प्रसिद्ध है। इस बीजक में रमैनी, सबद और साखी नाम के तीन भाग हैं।

उदाहरण—

कब तक देखूं मेरे राम सनेही।
जा बिन दुःख-पावे मेरी देहीं॥
मैं तेरा पन्थ निहारूं स्वामी।
कब रे मिलहुगे अन्तर्यामी॥
जैसे जल बिन मछली तलपै।
ऐसे हरि बिन मेरा जियरा कलपे॥
निसिदिन हरिबिन नींद न आवे।
दरस-पियासी राम क्यों सचुपावै॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

कहैं। कबीर अब बिलंब न कीजै।
अपनो जानि मोहि दरसन दीजै॥

हम न मरिहैं मरिहै संसारा।
हम कूं मिल्या जियावन हारा।
हरि मरिहैं तो हमहूँ मरिहैं।
हरि न मरै हम काहे कूं मरिहैं।
कहै कबीरा मन मनहिं मिलावा।
अमर भये सुख सागर पावा।

कबीरदास के जीवन-काल में ही उनके नाम से कबीर-पन्थ-चल पड़ा था। सम्वत् १५७५ में कबीरदास की

धर्मदास

मृत्यु हो गई, उनके बाद धर्मदास जी उनकी गद्दी पर बैठे। ये जाति के वैश्य थे। पहले ये सगुणोपासक थे, तीर्थ और मूर्तिपूजा पर इनका बहुत विश्वास था किन्तु बाद में ये निर्गुणोपासक हो गए।

इन्होंने कबीर की परिपाटी पर ही रचना की है किंतु खंडन-मण्डन से अलग रहकर केवल प्रेम-तत्व का ही प्रवाह बढ़ाया। भाषा भी इनकी परिमार्जित है। जैसे—

झरि लागै महलिया गगन घहराय!
खन गरजै, खन बिजुली चमकै, लहरि उठै, शोभा बरणि न जाय।
सुन्न मण्डल से अमृत बरसै, प्रेम अनंद ह्वै साधु नहाय॥
खुली केवरिया, मिटी अंधियरिया, धनि सतगुरु जिन दिया लखाय।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

धरमदास बिनवै कर जोरी सतगुर चरन में रहत समाय ॥

सन्त कवियों में गुरु नानक का भी बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

गुरु नानक

इनका जन्म सम्वत् १५२६ में लाहौर जिले के तलवंडी ग्राम में हुआ था। गुरु नानक ने हिंदू और मुसलमानों को सदा सर-फुटौअल करते देख कर एक ऐसा मत प्रचलित करने की इच्छा हुई जिसमें दोनों को समान रूप से शामिल होने का अधिकार हो। कबीर ने हिंदू और मुसलमानों के धार्मिक तत्वों का सण्डन और असमान तत्वों का खण्डन करके भेद-भाव की दीवार गिराने का प्रयत्न किया था। किंतु वह कार्य विध्वंसात्मक अधिक था, रचनात्मक कम। गुरु नानक ने इस दशा में रचनात्मक कार्य किया। उन्होंने सिख सम्प्रदाय चला कर उसमें हिंदू और मुसलमान दोनों को शामिल किया।

इनकी रचनाओं का संग्रह गुरु ग्रन्थसाहब में किया गया है। इनकी रचनाएँ अत्यन्त सरल हैं। उदाहरण—

नानक नन्हें हो रहौ जैसी नन्हीं दूब,
और घास जरि जात है दूब खूब की खूब।

मन की मनही माहिं रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे चोटी काल गही।
दारा मीत पूय रथ संपति धन जन पून महो।
और सकल मिथ्या यह जानो भजन राम सही।
फिरत-फिरत बहुते जुग हार्यो मानुस देह लही।
नानक कहत मिलन की बिरियां सुमिरित कहा नहीं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

कबीर-पन्थ की भांति ही एक दादू पन्थ भी प्रचलित है।

दादूदयाल इस पंथ के प्रवर्तक दादूदयाल का जन्म संवत् १६०१ में हुआ था। इनके जन्म के विषय में भी कबीर की भाँति ही रहस्य भरी बातें कही जाती हैं, उन बातों का धार्मिक जगत् में चाहे महत्व हो पर साहित्यिक जगत् को उससे कोई सरोकार नहीं। वह गुजराती ब्राह्मण हों चाहे मोची या धुनिया इससे उनकी रचनाओं में कोई अंतर नहीं पड़ता। दादूदयाल जी का प्रचार-क्षेत्र ज्यादातर राजपूताना रहा। बाद में ये जयपुर के पास नरैना में स्थायी रूप से रहने लगे थे, इनकी मृत्यु सम्वत् १६६० में भरेना नामक पहाड़ी पर हुई। यही स्थान दादूपंथियों का अड्डा है। ये लोग निराकार ब्रह्म की उपासना करते हैं।

दादू की वाणी भी कबीर की वाणी के समान है। उन पर कबीर का काफी प्रभाव जान पड़ता है। इनकी वाणी की भाषा में खड़ी बोली और राजस्थानी का मिश्रण सी है।

जहँ आतम तहँ राम है सकल रहा भरपूर।
अन्तर गति लव लाइ रहु दादू सेवक सूर।
अन्धे को आनंद हुआ नैनहूं सूझन लाग।
दरसन देखई पीय का दादू मोटे भाग।
जहां राम तहँ मैं नहीं मैं तहँ नाहीं राम।
दादू महल बारीक है, दुइ को नाहीं ठाम ।।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

निर्गुण ब्रह्म को माननेवाले सन्त कवि, कबीर, धर्मदास, दादू दयाल नानक आदि भाषा के पण्डित नहीं थे।

सुंदरदास

उनका ज्ञान सतसंग और साधना का फल था। किंतु आगे चलकर संत कवियों में भी शास्त्रवेत्ता, सुपण्डित और सुकवि हुए हैं। उनमें सब से महत्वपूर्ण स्थान सुन्दरदास का है। ये दादूदयाल के शिष्य थे। इन्होंने काशी में संस्कृत व्याकरण, वेदाङ्ग, पुराण आदि का अच्छी तरह अध्ययन किया है इन्हें काव्य-कला की भी समुचित शिक्षा मिली थी। इनकी भाषा परिमार्जित व्रजभाषा थी। इनकी रचनाएँ इनको सफल कवि की कोटि में स्थान दिलाती हैं। इनका सुन्दर-विलास नाम का काव्य-ग्रंथ खूब प्रसिद्ध है।

इनकी और अन्य संत कवियों की रचनाओं में यही अंतर है कि जहाँ अन्य कवियों की वाणी में कहीं-कहीं पर तात्त्विक दृष्टि से परस्पर विरोधी बातें भी नज़र आती हैं, वहाँ इनकी रचनाएँ एक क्रम और सिद्धान्त से बँधी हुई हैं। इनकी रचना का एक नमूना यहाँ दिया जाता है।

> ब्रह्म ते पुरुष अरु प्रकृति प्रकट भई
>
> प्रकृति तें महत्तत्व, पुनि अहङ्कार है।
>
> अहङ्कार हू ते तीन गुण-सत रज तम,
>
> तमहू तें महाभूत विषय पसार है।
>
> रजहू तें इंद्री दस पृथक पृथक भई,
>
> सत्तहू तें मन आदि देवता विचार है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ऐसे अनुक्रम करि सिष्य सूं कहत गुरु
सुन्दर दास यह मिथ्या भ्रमजार है ॥

सन्त कवियों में मलूकदास का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इनका जन्म सम्वत् १६३१ में हुआ। उन्होंने भी हिन्दुओं और मुसलमानों को समानरूप से आत्म-ज्ञान की गंगा में स्नान कराया है। इनकी भाषा में उर्दू फारसी के शब्द भी आए हैं, खड़ी बोली के तो उसमें दर्शन होते ही हैं। उदाहरण—

मलूकदास

सबहिन के हम सबै हमारे,
जीव जन्तु मोहिं लगैं पियारे।
दोनों लोक हमारी माया,
अन्त कतहुं से कोइ नहिं पाया।
छत्तिस पवन हमारी जाति,
हमहीं दिन और हमहीं राति।

महाराजा छत्रसाल के गुरु अक्षर अनन्य भी अच्छे विद्वान् थे और सुकवि भी। इनके जन्म काल और रचना काल का ठीक-ठीक पता नहीं चलता लेकिन सम्वत् १७१० में ये जीवित थे ऐसा ज्ञात होता है। इन्होंने योग और वेदान्त पर कई ग्रन्थ लिखे हैं।

अक्षर अनन्य

इन सन्तों के स्वर में स्वर मिला कर बाद में बहुत सी रचनाएँ होती रही हैं। इनके रचयिता अधिकांश में अपढ़ साधु-सन्त हुए हैं। कबीर, दादूदयाल और नानक आदि सन्तों के सम्प्रदाय में

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

बँधकर इनका चिरंतन सत्य, इनका मानव धर्म इनकी रस-वाणी संकुचित सी हो चली। कबीर और नानक की बाणी में अखिल विश्व का आह्वान है किन्तु उनके बाद जो उनके शिष्य हुए उन्होंने अपने आपको सम्प्रदायों में बाँध लिया, इसलिए आगे यह धारा समाप्त सी हो गई। पूर्ण रूप से समाप्त नहीं हुई तो कम से कम अपनी व्यापकता और आकर्षण को खो बैठी।

आधुनिक काल में श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे महान् कवि ने इन संत कवियों का अपने ऊपर ऋण माना है। इन्हीं सन्तों की वाणियों से प्रभावित होकर आधुनिक हिन्दी काव्य-जगत् में विशेष सरसता और नवीन को लेकर रहस्यवाद और छायावाद की रचनाओं का आविर्भाव हुआ है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

भक्ति-काल

प्रेम-मार्ग

भक्ति-काल में जहाँ कबीर, दादू, और नानक जैसे सन्तों ने अलख, निरंजन के प्रेम-गीत गाए हैं वहाँ कुतबन मंझन और जायसी जैसे सुकवियों ने अपनी रचनाओं में लौकिक प्रेम को अलौकिक सीमा में पहुँचाकर रस का एक नया ही स्रोत प्रवाहित किया है। जिस प्रकार आधुनिक काल में रहस्यवादी कवि आत्मा और परमात्मा के पारस्परिक संबन्ध, मिलन-वियोग बन्धन-मुक्ति के रहस्यों का उद्घाटन करते हैं, उसी तरह सन्त कवियों ने निर्गुण ब्रह्म के गान गाए थे। जिस तरह आजकल छायावादी सीमित वस्तुओं के घूंघट में असीम के दर्शन करते हैं, उसी प्रकार प्राचीन कवियों ने मानव के प्रति प्रेम को अलौकिक रूप दिया है। संसार की प्रत्येक वस्तु में उस परमेश्वर की छवि की झलक दिखलाई है। जिस प्रकार वीरकाल के कवियों ने वीर-गाथाएँ लिखी थीं उसी तरह भक्ति-काल के प्रेम-मार्गी सन्त कवियों ने प्रेम गाथाएँ लिखी हैं। प्रेम-मार्गी सन्त कवियों में कुछ मुसलमान हैं सूफ़ी धर्म का प्रतिपादन करने वाले हैं। इसी परिपाटी पर लिखने वाले जो हिन्दू कवि हुए हैं। उन्होंने भी सूफ़ी सिद्धांतों की शरण ली है।

इन सन्त कवियों की रचनाएँ यद्यपि लौकिक राजकुमार और राजकुमारों की काल्पनिक प्रेम-कथाएँ हैं, किन्तु उनमें चिरंतन

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

राजकुमार और राजकुमारी की भावनाएँ भरी है, यानी उन्होंने प्रेमी और प्रेमिका को प्रत्यक्ष परमेश्वर का स्वरूप दिया है और अन्त में सूफ़ियों के 'अनलहक़' तथा वेदांतियों के 'सोहं' सिद्धान्तों का निरूपण किया है। कबीर पर भी सूफ़ी सम्प्रदाय के मुसलमान सन्तों का प्रभाव पड़ा है।

कुतवन

कुतबन हिन्दी के प्रथम सूफ़ी कवि हुए हैं। इन्होंने सम्वत् १५५८ के लगभग मृगावती नाम की एक सुन्दर प्रेम-गाथा लिखी है। इसमें चन्द्रनगर के राजकुमार और राजा रूपमुरारी की कन्या मृगावती की प्रेम-कथा के बहाने सर्वसाधारण को प्रेम-साधना की कठिनाइयाँ दिखलाई हैं। बीच-बीच में अनेक आध्यात्मिक तत्वों का संकेत किया है।

मंझन

कुतबन के मृगावती काव्य से मंझन कवि का मधुमालती नामक प्रेम-काव्य अधिक सरस, हृदय-ग्राही और कला की दृष्टि से सुन्दर हुआ है। मंझन कब हुए, कौन थे इस विषय में अभी तक संसार कुछ नहीं जान पाया, किन्तु उनके ग्रंथ की अपूर्ण प्रति प्राप्त हुई है। यह अपूर्व प्रति ही साहित्य और भावना जगत् की अमूल्य निधि है। इसमें मनोहर नामक राजकुमार का मधुमालती नामक राजकुमारी से प्रेम का बहुत सरस वर्णन है।

इन्होंने प्रेमी और प्रेमिका के सौंदर्य और प्रेम को शुद्ध और अलौकिक रूप में अंकित किया है। वर्णन शैली और

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

कल्पना बहुत सुन्दर है। उनकी कविता का एक उदाहरण यहाँ दिया जाता है।

देखत ही पहिचाने उतोहीं,
ऐही रूप जेहि छँदरयो मोहीं।
एही रूप बुत अहै छपाना,
एही रूप रब सृष्टि समाना।
एही रूप सकती और सीऊं,
एही रूप त्रिभुवन कर जीऊं।
एही रूप प्रगटे बहु भेसा,
एही रूप जग रंक नरेसा।

प्रेम-मार्गी सन्तों या कवियों की रचनाओं में मलिक मुहम्मद जायसी का 'पद्मावत' काव्य बहुत प्रसिद्ध है। यह ग्रन्थ सम्वत् १५६७ के लगभग लिखा गया था। जायसी अपने काल के अत्यन्त प्रसिद्ध सिद्ध सूफ़ी फकीर माने जाते थे।

मलिक मुहम्मद जायसी

इन्होंने जाति-पाँति की सीमाओं से परे रहने वाले चिरंतन प्रेम की पावन-धारा में हिन्दू और मुसलमानों के हृदयों को स्नान करा कर उनके बीच की कटुता को दूर किया है। कबीर ने अदृश्य शक्ति का आधार लेकर हिंदुओं और मुसलमानों को खोटी-खरी सुनाकर एक करने का उद्योग किया, किंतु जायसी ने जिस चिरंतन प्रेम की रस-वर्षा से मानवमात्र को प्लावित किया वह मानव-मानव को गले मिलाने में अधिक सफल हुआ। इसमें

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती और चित्तौड़ के राणा रतन-सेन की प्रेम-गाथा कही है। इसमें इतिहास और कल्पना दोनों का समावेश है।

इस काव्य में भावों की उच्चता, सरसता, मनोहरता, कल्पना की विशदता, वर्णन शैली की उत्कृष्टता देखने योग्य है। इसमें भी अन्य सूफ़ी कवियों की भाँति लौकिक प्रेम में अलौकिकता की व्यञ्जना की गई है—बहुत सफलतापूर्वक की गई है। इनकी कविताचातुरी का एक उदाहरण दिया जाता है।

सरवर तीर पदमिनी आई,
खोंपा छोरि केस मुकलाई।
ससि मुख, अंग मलयगिरि बासा,
नागिन झांपि लीन्ह चहुं पासा।
ओनई घटा परी जग छांहा,
ससि कै सरन लीन्ह जनु राहा।
भूलि चकोर दीठि मुख लावा,
मेघ घटा महं चंद दिखावा।

इनका एक और ग्रंथ अखरावट है, जिसमें आध्यात्मिक विषयों पर इन्होंने अपने विचार प्रकट किये हैं।

उसमान

जायसी की लकीर पर चलने में शेख उसमान को अच्छी सफलता मिली थी। ये शेख निजामुद्दीन चिश्ती के शिष्य हाजी बाबा के शिष्य थे। ये जहांगीर के समय में मौजूद थे, इन्होंने चित्रावली नाम की प्रेम-गाथा लिखी है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

प्रेम-मार्गी सन्त कवियों की परम्परा सम्वत् १६२२ तक चलती रही। शेख नबी ने सम्वत् १६७६ में 'ज्ञान-दीप' कासिम-शाह ने सम्वत् १७८८ में हंस जवाहिर, नूर मुहम्मद ने सम्वत् १८०१ में इन्द्रावती, फ़ाज़िलशाह ने सम्वत् १६०५ के लगभग प्रेम-रतन नामक रचनाएँ लिखीं।

इनके अतिरिक्त और अनेक कवित्रों ने इसी प्रकार की ऐति-हासिक, पौराणिक और काल्पनिक रचनाएँ लिखी हैं। इनमें सौंदर्य का अलौकिक रूप प्रेम की साधना, प्रेम-मार्ग की कठिना-इयाँ और सिद्धि के संकेत बहुत सरस रूप में दिए हैं। साहित्यिक दृष्टि से भी ये रचनाएँ अपना अलग स्थान रखती हैं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

भक्तिकाल

कृष्ण-भक्ति धारा

सगुणोपासना का प्रचलन वास्तविक अर्थों में शंकराचार्य के समय में ही होगया था। पर भक्ति के आधार को दृढ़ बनाने के लिए माया-लिप्त जीव को ब्रह्म से अलग करने का काम फिर भी शेष था। 'नारायणी धर्म' की प्रतिष्ठा द्वारा सेवक-सेव्य-भाव की स्थापना से वेदान्त की शुष्क समस्या भी सरस बनगई थी। परन्तु भक्त हृदय को आनन्द विभोर करने वाले साधनों का अभाव फिर भी दूर न हुआ। यह कमी कृष्ण भक्ति की वात्सल्य और शृङ्गार धाराओं में आकण्ठ निमज्जित होने पर ही पूरी हुई।

कृष्ण के लीलामय रूप के साथ सख्यभाव की स्थापना कर उपासकों ने सब कुछ प्राप्त कर लिया। कृष्ण के बहुमुखी प्रयत्नों में सभी रसों की सामग्री मिल जाती है। एक ओर यशोदा की क्रोड़ में मचलने वाले बाल कृष्ण वात्सल्य भाव को जागृत करते हैं तो दूसरी ओर कंस को विध्वंस कर वीर रस का स्रोत बहा देते हैं। कभी कालिन्दी कूल के कमनीय कुञ्जों में ग्वाल-बाल और गोपिकाओं के प्रणयकलह को निपटाते हैं तो कभी कुरुक्षेत्र के रणाङ्गण में उलझी हुई राजनीतिक समस्याओं को मिनटों में सुलझा देते हैं। उन्हें कभी हम राधा की मान-मनौअल में उरझा हुआ पाते हैं तो कभी-युद्ध-भूमि में गीता के अनासक्ति योग का उपदेश देते। ऐसे महान पुरुष के व्यक्तित्व में वह कौनसा रस है,

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

जिस की भवसागर में भटकने वाले मनुष्यों को उपलब्धि न हो सके ! यही कारण है कि कृष्ण-भक्ति धारा ने जहाँ भारतीयों के हृदय में भक्ति की भाव-सरिता प्रवाहित कर दी वहाँ हिन्दी-साहित्य के क्षेत्र में भी क्रान्ति मचादी ।

वैष्णव धर्म का जो देश-व्यापी आन्दोलन पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी में उठा श्री वल्लभाचार्य उसके

श्री वल्लभाचार्य प्रवर्तकों में प्रधान थे । आपका जन्म संवत् १५३५ वैशाख कृष्ण ११ को और गोलोकवास १५८७ आषाढ़ शुक्ल ३ को हुआ । आप वेद शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित थे । आपने वेदान्त सूत्रों पर स्वतन्त्र रूप से विद्वतापूर्ण भाष्य लिखकर शुद्ध द्वैतवाद की स्थापना की है । आपने समस्त भारत का पर्यटन कर अपने मत का प्राचर किया था । रामानन्द ने जिस प्रकार रामको ईश्वर का अवतार माना है उसी प्रकार आपने कृष्णको । जीवन के अन्तिम काल में आपने व्रजभूमि में जाकर अपनी गद्दी स्थापित की थी । कृष्ण-भक्ति धारा को प्रबल रूप में प्रवाहित करने वाले प्रायः सभी इसी गद्दी के शिष्य थे । शताब्दियों तक ब्रजभूमि को गीत-काव्य की मधुर-ध्वनि से मुखरित करने का श्रेय आपकी इस गद्दी को ही है । आपके ही सुपुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ ने इस धारा के तत्कालीन सर्वश्रेष्ठ आठ कवियों को चुनकर 'अष्टछाप' की प्रतिष्ठा की थी ।

कृष्ण भक्त कवियों में सूरदास का आसन अत्यन्त महत्व का

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सूरदास

हैं। इन्हें यदि हिन्दी का आदि कवि कहा जाय तो जरा भी अत्युक्ति न होगी। इनसे पहले भी हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ कवि कबीर दास 'चरणदास' नानक आदि हुए हैं किन्तु भाषा की दृष्टि से साहित्य-जगत में इनकी कविताओं का यथेष्ट आदर नहीं हुआ था। सूरदास ने इन समस्त न्यूनताओं की पूर्ति कर हिन्दी साहित्य को विश्व-साहित्य की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया !

आपका जन्म १५४० के लगभग मथुरा आगरा के बीच हनकता ग्राम में हुआ था। आपके पिता रामदास सारस्वत ब्राह्मण थे। बल्लभाचार्य के ब्रजमण्डल पधारने पर आपने उनसे दीक्षा ली। आचार्य जी की आज्ञानुसार ही आपने श्रीमद्भागवत की कथा को गीतों में गाया है। उसका सरससंग्रह 'सूर सागर' के नाम से प्रसिद्ध है।

भक्तमाल में सूरसागर के पदों की संख्या एकलाख बतलाई गई है। पर अबतक ५-६ हज़ार पदों से अधिक उपलब्ध नहीं। आपके लिखे हुए ग्रन्थों में सूरसारावली, सूरसागर, साहित्य लहरी उपलब्ध हैं किन्तु व्याहलो और नल दमयन्ती अब तक अप्राप्य हैं।

आप की कविता सरल है, उसमें जीवन के तत्वों का मार्मिक चित्रण है। सरलता की दृष्टि में भी शृङ्गार की लुनाई का लोकोत्तर चातुर्य और अनूठा आनन्द है। बाल-लीला वर्णन में तो ये विश्व साहित्य में बेजोड़ हैं। कृष्ण की बाल-लीला का ललित

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

चित्रण शिशु की स्वाभाविक मनोवृत्तियों का अङ्कन करने में इन्होंने कमाल कर दिया है। आप की रचना पढ़कर यही प्रतीत होता है कि आप माँ यशोदा के हृदय में बैठकर आँखों से सब कुछ स्वयं देख रहे थे। बालक के अस्फुट हास्य, फूलों की मन्द-मुसकान, नदी-नालों के भावमय कलरव, उषा के क्रन्दन का चित्रण करने में सूर ने सचमुच सजीवता पैदा कर दी है। शृङ्गार में विरह का वर्णन करते समय गोपियों की विकल-वेदना के साथ आप ने अशेष प्रकृति पर भी निस्तब्धता और नीरवता का आवरण डाल दिया है। सूर की तन्मयता, उनका वात्सल्य और शृङ्गार अन्यत्र दृष्टिगोचर ही नहीं होता। इनके काव्य प्रभाव से आज भी हिन्दी साहित्य में सरसता का स्रोत अमर-गति से उमड़ रहा है। आप के भ्रमर गीत, साहित्य-कोष की अनूठी चीज हैं। आप की मृत्यु सम्वत् १६२० के लगभग हुई थी। आपकी कोमल-कान्त-पदावली के कुछ नमूने ये हैं—

मैया मैं नहीं माखन खायो।

ख्याल परै ये सखा सबै मिलि मेरे मुख लपटायो ॥

देखि तुही छींके पर भाजन ऊँचे घर लटकायो।

तुही निरखि नान्हे कर अपने मैं कैसे करि पायो।

मुख दधि पोंछि कहत नंदनन्दन दोना पीठ दुरायो

डारि सांट मुसकाइ तबहि गहि सुत को कंठ लगायो ॥

बालकों की स्वप्नमयी सृष्टि के सुमन को सूर ने अपने अमर हार में लोकोत्तर चातुरी से गूंथा है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ऊधो हमहिं कहा समुझावहु !

पसु पंछी सुरभी ब्रज की सब, देखि स्त्रवन सुनि आवहु ॥

तृन न चरत गो पिवत न सुतपय, ढूंढत बन-बन डोलै ।

अलि कोकिल दे आदि विहंगम भीत भयानक बोलै ॥

जमुन भई तनु स्याम बिनु, अन्ध छीन जे रोगी ।

तरुवर पत्र वसन न सँभारत विरह वृक्ष भए जोगी ॥

गोकुल सब लोग दुखित हैं, नीर बिना ज्यों मीन ।

सूरदास प्रभु प्रान न छूटत, अवधि आस में लीन ॥

आन्तरिक जगत का प्रकृति के साथ कैसा सुन्दर तदात्म्य है ।

ये भक्त शिरोमणि तुलसीदास जी के भाई और गोस्वामी विट्ठलदास के शिष्य थे । अष्टछाप के कवियों में सूरदास के बाद इन्हीं का स्थान है । ये उनके समकालीन थे किन्तु इनका कविता काल सूरदास की मृत्यु के पश्चात् से प्रारम्भ होता है । ये संस्कृत और हिंदी के अच्छे विद्वान् थे । इन्होंने लगभग १६ पुस्तकें लिखी हैं जिनमें रास पंचध्यायी, भ्रमर गीत, अनेकार्थ मंजरी और अनेकार्थ नाममाला अब तक प्रकाशित हुई हैं ।

नन्ददास

आप की भाषा में चुने हुए पद विन्यास और अनुप्रास का अच्छा व्यवहार हुआ है । आप की रचना में सरसता और मधुरता का अच्छा समन्वय है, बानगी सामने है—

फटिक-छटासी किरन कुंज-रध्रन जब आई ।

मानहु वितन वितान सुदेन तनाव तनाई ॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

तब लीनो कर कमल योग माया सी मुरली
अघटित-घटना-चतुर बहुरि सुर जुरली ॥

ये भी वल्लभाचार्य के शिष्य और अष्टछाप में से एक थे। ये शूद्र थे। फिर भी आचार्य का उन पर बड़ा स्नेह था। उन्होंने इन्हें मन्दिर का प्रधान बना रखा था। इन्होंने भी शृङ्गार रस में राधा कृष्ण के गीत गाए हैं। इनका एक छोटा ग्रन्थ उपलब्ध है जिसका नाम जुगल मान चरित्र, इनकी कविता साधारण श्रेणी की हैं।

कृष्णदास

इनका समय सम्वत् १६०६ के आस पास है। ये कान्यकुब्ज ब्रह्मण, श्री वल्लभाचार्य के शिष्य और अष्टछाप में से थे। इनकी कविता में सरसता और तन्मयता का इतना सुन्दर समावेश होता था कि आचार्य जी किसी एक पद को सुनकर कई दिन तक बेसुध पड़े रहे।

परमानन्द दास

इनके पदों का एक संकलन, ध्रुव चरित्र और दान लीला नामक तीन छोटी पुस्तकें ही अब तक प्राप्त हो सकी हैं। इनके अस्फुट पद आज भी दीहातों में लोग बड़ी तन्मयता के साथ गाया करते हैं। आपकी कविता का एक नमूना पाठकों के सामने उपनीत किया जाता है—

राधे जू हारावलि टूटी
उरज कमल दल-माल मरगजी,
बाम कपोल अलक-लट छूटी।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ये परमानन्द दास के समकालीन 'अष्टछाप' के एक कवि थे।

कुम्भनदास लोकैष्णा से कारे कोसो दूर रह कर ये भक्ति-भाव में ही तल्लीन रहते थे। एक बार अकबर ने इन्हें फतहपुर सिकरी में बुलाकर इनका बड़ा सम्मान किया। किन्तु इनको यह अच्छा न लगा। इनका कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं फुटकल पदों में कृष्ण की बाल लीला और प्रेम लीला का वर्णन है। इनकी कविता भाव और भाषा दोनों दृष्टियों से सुन्दर है। अकबर के दरबार से लौटने पर आपने जो पद लिखा था वह पाठकों के सामने नमूने के रूप में पेश किया जाता है।

सन्तन को कहा सीकरी सो काम ?
आवत जात पनहियाँ टूटी, विसरि गयो हरिनाम ॥
जिनको मुख देखे दुख उपजत, तिनको करिबे परी सलाम।
कुम्भन दास लाल गिरधर बिनु और सबै बेकाम ॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

चतुर्भुज दास — ये कुंभन दास के पुत्र और विट्ठलनाथ जी के शिष्य थे। इन की भी गणना अष्ट छाप के कवियों में की गई है। इनके समय तक हिन्दी भाषा बहुत कुछ व्यवस्थित हो गई थी। अस्तु आप की रचना सुगठित और भाषा चलती है। द्वादश यश, भक्ति-प्रताप, हित जी को मंगल नामक इनके तीन ग्रन्थ तथा फुटकल रचनाएँ मिलती हैं।

छीत स्वामी — ये मथुरा के वैभव सम्पन्न पण्डे थे। इन का स्वभाव उद्दण्ड और निर्भीक था। किन्तु गोस्वामी विट्ठलनाथ जी से दीक्षा लेने के पश्चात ये शाँत और भावुक भक्त बन गए! इन्होंने अपना शेष जीवन कृष्ण गुन-गान में व्यतीत किया है।

इन्हें बृजभूमि से बहुत प्रेम था, जिस को झलक इनकी उपलब्ध फुटकल कविताओं में भी मिलती है। अष्टछाप के कवियों में से आप भी एक थे। आप की भाषा सुथरी और रचना सरस है। आपका कविता काल संवत् १६१२ के लगभग है।

गोविंद स्वामी — ये अंतरी निवासी सनाढ्य ब्राह्मण थे। गोस्वामी विट्ठल नाथ से दीक्षा लेने के बाद ये भी अष्टछाप के अन्तर्गत आगए। ये बड़े भावुक और प्रकृति प्रेमी प्राणी थे। ये गोवर्द्धन पर्वत पर निवास करते समय आपने वहाँ कदम्ब निकुञ्जों का एक उपवन आरोपित किया था, जो आज तक आप के नाम से प्रसिद्ध है। आप सुन्दर संगीतज्ञ, गायक और कवि थे। तानसेन भी प्रायः इनका संगीत सुनने के

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
लिए आया करते थे । आप का कविता काल लगभग १६०० के है ।

राधावल्लभी सम्प्रदाय के प्रवर्तक गोसाईं हित हरिवंश का जन्म केशवदास मिश्र के यहाँ मथुरा जिले के बाद ग्राम में हुआ था । कहा जाता है कि आपने स्वप्न में श्री राधिका जी से मंत्र ग्रहण किया था ।

हित हरिवंश

आप के एक कन्या और चार पुत्र थे । गृहस्थाश्रम धर्म में भी आप विरक्त की ही भांति रहते थे । संवत् १५८८ में आपने वृन्दा-बन में श्री राधा वल्लभ की मूर्ति स्थापित की थी । आप संस्कृत के अच्छे विद्वान और भाषा काव्य के मर्मज्ञ थे । आप के पदों का संग्रह 'हित चौरासी' के नाम से प्रसिद्ध है । कहीं कहीं तो इस ग्रन्थ में कवि कोकिल जयदेव के काव्य का आनन्द मिलता है । साहित्य में किसी ने आप को सेनापति का समकक्ष बतलाया है और किसी ने देव का । गोसाईं जी की शिष्यमण्डली द्वारा ब्रज भाषा का अच्छा विकास हुआ है । भक्तिपक्ष में ये कृष्ण की वंशी के अवतार माने जाते हैं । आप की कविता की बानगी निम्नांकित है ।

आजु बन नीको रास बनायौ ।
पुलिन पवित्र सुभग जमुना-तट, मोहन बेनु बजायौ ॥
कल-कंकन नूपुर ध्वनि, सुनि खग मृग सचुपायौ ।
जुवतिन मंडल मध्य स्याम घन, सारंग राग जमायौ ॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आप दक्षिण प्रदेश के किसी गाँव के रहने वाले थे। चैतन्य देव को श्रीमद्भागवत सुनाया करते थे। आप संस्कृत के चूड़ांत पण्डित और भाषा के प्रकाण्ड विद्वान थे। आपकी रचना सरस सुन्दर सानुप्रास भक्ति भाव पूर्ण है। आपकी सुन्दर पदविन्यास युक्त रचना में त्याग अनुराग और भक्ति की वह पावन त्रिवेनी प्रवाहित होती है जिसका दर्शन अन्य विरले ही कवि की काव्य में मिलेगा आपकी रचनाओं का आरम्भ लगभग संवत् १५८० के है। आप का कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं मिलता। फुटकर पद ही उपलब्ध होते हैं जिनका नमूना नीचे देखिए!

गदाधर भट्ट

नमो नमो जय श्री गोविंद।

आनँदमय वृज सरस सरोवर, प्रगटति बिमल नील अरविंद;
जसुमति नीर नेह अति पोषित, नवनव ललित लाड़ सुखकन्द॥
ब्रजपति तरनि प्रताप-प्रफुल्लत, प्रसरित सुजस सुवास अमन्द।
सहचरि-जाल-मराल संग रंग, रसभरि नित खेलत सानन्द।
अलि गोपीजन नैन गदाधर, सदा पिवत रूप मकरंद॥

मीरा का जन्म राठौरों की मेड़तिया शाखा में, सम्वत् १५७५ के आस पास चोकड़ी नाम के गांव में हुआ था। ये रत्नसिंह की इकलौती पुत्री और राणा सांगा के बड़े पुत्र कुंवर भोजराज की रानी थीं। मीरा का हृदय बाल्यकाल ही से कृष्ण प्रेम में रङ्ग गया था। विवाह के कुछ वर्षों के बाद आप पर आपत्तियों का

मीराबाई

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

पहाड़ ही टूट पड़ा। पिता खनवा के युद्ध में बाबर से लड़ते हुए मारे गए। पति देव और सास-ससुर भी चल बसे! मीरा ने भी संसार का माया-मोह छोड़ कर गिरधर के चरणों में अपने जीवन को चढ़ा दिया—आप के ही शब्दों में—

आज म्हांरे साधू जन तो संग रे,
राणा तुम्हरा भाग भख्यां।
साधू जन के संग जे करिये,
चढ़ेते चौगूणों रंग रे!

मीरा की तन्मयता इतनी अधिक बढ़ गई कि वे मन्दिरों और साधु-सन्तों के संग में बैठती और गातीं। कहा जाता है कि इस राजकुल विरुद्ध आचरण के कारण इनके स्वजन इनसे रुष्ट हो गए और कई बार इन्हें विष भी दिया किन्तु वह इनके शरीर में पहुंच कर कोई भी प्रभाव न कर सका। वंश वालों के व्यवहार से तंग आकर इन्होंने वृन्दाबन और द्वारिका की यात्रा की। वहां भजन गा-गाकर सुनाया करती थीं। द्वारिका में ही इनकी मृत्यु हो गई।

देवी मीरा की उपासना माधुर्य से ओतप्रोत थी। आप ने कृष्ण की पतिरूप में आराधना की है। आप की गणना भारत के प्रधान भक्तों में की जाती है। आप की तन्मयता और तल्लीनता विरले ही भक्तों ने पाई है। आप की भाषा कुछ राजस्थानी मिश्रित और कहीं कहीं विशुद्ध वृजभाषा है। आप परले नम्बर की भक्त और उच्च श्रेणी की कवित्री थीं। आप की कविता का पान कर हृदय झूमने लगता है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

देवी मीरा की कोमल-कान्त-पदावली, भाषा-सौन्दर्य का अनुपम रत्नहार है। आपके रचे नरसी जी मायरा गीत गोविन्द टीका, राग गोविन्द, राग सोरठ के पद—ये चार ग्रन्थ बतलाए जाते हैं। आप की भक्ति भरी भाव प्रवणता का नमूना नीचे दी गई पदावली में देखिये!

(१)

मन रे परसि हरि के चरण

सुगम सीतल कँवल कोमल, त्रिविध ज्वाला हरण।
जिण चरण प्रहलाद परसे, इन्द्र पदवी धरण।
जिण चरण ध्रुव अटल कीये, राखि अपनी सरण॥

(२)

आवत मोरी गलिय में गिरधारी, मैं तो छुप गई लाज की मारी।
कुसुमल[1] पाग के केसरिया जामा, ऊपर फूल हजारी
मुकुट ऊपरे छत्र विराजै, कुण्डल की छवि न्यारी।
ऊभी[2] राधा प्यारी अरज करत है, सुण जे किसन मुरारी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरण कमल पर वारी॥

आपके जन्म सम्वत्, स्थान और जाति के विषय में बहुत बड़ा मतभेद है। यह अच्छा भी है, क्यों कि

स्वामी हरिदास

स्वामी जी सभी संसारिक जाति भेदों और बन्धनों से परे थे। आप निशि-वासर राधाकृष्ण लीला-बिहार में मस्त रहा करते थे।

---

१. कुसुम के रंग की   २. खड़ी

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आप त्यागी निस्प्रह और रसिक शिरोमणि थे। निम्बार्क सम्प्रदाय के अन्तगर्त टट्टी सस्थान के संस्थापक भी आप ही थे। प्रसिद्ध सङ्गीताचार्य तानसेन के आप गुरू थे। आप ने पदों में ही कविता लिखी है। वे पढ़ने में पिंगल संगित नहीं जँचते पर संगीत के रूप में पूरे उतरते हैं। आपकी कविता में मनोहरता, मार्मिकता और भक्ति एवं अनुभूति ऊंचे दरजे की है! आपने सिद्धान्त और शृंगार दोनों ही पर पदावली लिखी है। आपके सिद्धान्त विषयक १६ तथा शृंगार विषयक ११० पद मिलते हैं। अकबर के शासन काल में आप पूर्ण ख्यति प्राप्त कर चुके थे। आपकी कविता का उदाहरण नीचे उद्धृत किया जाता है।

हित तो कीजै कमल नयन सों,
जाहित के आगे और हित लागै फीको।
कै हित कीजै साधु सँगति सों,
जावै कलमष जी को॥

सम्राट अकबर के ही काल में सूरदास मदन मोहन नाम के परम भक्त वैष्णव हुए थे। पहले वे संडीले नाम

सूरदास-मदनमोहन के स्थान में सरकारी अमीन थे! ये प्रारंभ से ही ऐसे अलमस्त थे कि एक बार सरकारी खजाने में आए १३ लाख रुपए साधुओं को बांट दिए। संदूकों में पत्थर भर कर खज़ाने में भेज दिये, साथ में एक चिट में लिख भेजा।

तेरह लाख संडीले आये सब साधुन मिलि गटके।
सूरदास मदनमोहन आधी रात सटके॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

उस दिन से वह लटके और संसार से लटके ही रहे। अकबर ने उन्हें बुलाया भी पर उन्होंने सरकारी ओहदों से वृंदावन की गलियों को ज्यादा पसन्द किया। उन का रचना काल १५६० के आस पास है।

उन की रचनाएँ सुन्दर और सरस होती थीं। उनका नाम सूरदास होने के कारण उनके कई पद सूर-सागर में मिल गए थे। उनका कोई ग्रंथ नहीं मिलता केवल फुटकर छंद मिलते हैं उदाहरण

चलौरी मुरली सुनिए कान्ह बजाई जमुना तीर,
तजि लोक-लाज, कुल की कानि गुरु जन की भीर।
जमुना-जल थकित भए, बछा न पीयें छीर,
देह की सुधि बिसरि गई बिसरो तन को चीर।
मात-तात बिसरि गए बिसरे बालक वीर,
मुरली धुनि मधुर बाजै कैसे कै धरों धीर।
सूरदास मदन मोहन जानत हो पर-पीर॥

निम्बार्क संप्रदाय में केशव काश्मीरी नाम के आचार्य हुए हैं।

श्री भट्ट — इन के विषय श्री भट्ट ने बहुत सरसकाव्य रचना की है। इनका रचना-काल संवत् १६२५ के आस पास समझना चाहिए। इनके लिखे दो काव्य ग्रंथ 'युगल-शतक' और आदि-वाणी मिलते हैं।

उदाहरण—जुगल किशोर हमारे ठाकुर।
सदा सर्वदा हम जिनके हैं जनम जनम घर जाके चाकर॥
चूक परै परिहरै न कबहूँ सबही भांति दया के आकर।
जै-श्री-भट्ट प्रगट त्रिभुवन में प्रनतनि पोषत परम सुधाकर॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ओरछा नरेश मधुकर शाह के राजगुरु श्री हरिराम व्यास का उस समय ब्रज-मंडल में अच्छा नाम था। इन्होंने

व्यास जी

ओरछा के मान-सम्मान को त्यागकर वृंदावन के भक्ति-रस परिपूर्ण वातावरण में रहना पसन्द किया। जब ओरछा नरेश इन्हें बुलाने गए तो इन्होंने उनसे कहा।

वृन्दावन के रूख हमारे मात-पिता सुत बंध।
गुरु गोविंद साधु गति मति सुख, फल-फूल को गंध!
इनहिं पीठि दै अनत डीठि करि सो अंधन में अन्ध।
व्यास इनहिं छोड़ै औ छुड़ावै ताको परियो कंध!

निश्चय ही ये अत्यन्त भावुक थे। इनका रचना-काल सम्वत १६२० के आस पास है। उदाहरण—

कहा कहा नहिं सहत सरीर।
स्याम-सरन बिनु करम सहाइ न, जनम मरन की पीर॥
करुनावन्त साधु संगति बिनु मनहिं देय को धीर।
भक्त भागवत बिनु को मेटै सुख दे दुख की भीर॥
बिनु अपराध चहूं दिसि बरषत पिसुन-बचन अति नीर।
कृष्ण कृपा कचनीतें उबरैं पावै तब हीं सीर॥
चेतहु भैया, बेगि बटी कलिकाल नदी गम्भीर।
व्यास बचन बलि वृन्दाबन बसि सेवहु कुंज कुटीर॥

कृष्ण-प्रेम के पवित्र और मधुर वातारण ने न केवल हिंदुओं को बल्कि मुसलमानों को भी आकृष्ट किया।

रसखान

यदि हिंदुओं के भक्त सम्प्रदायोंमें जाति सम्बन्धी बाधाएँ न होतीं तो मुसलमान भक्तों की संख्या कहीं ज्यादा होती। फिर भी ऐसे मुसलमान भक्त हो गए हैं

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

जिन्होंने कोई बाधा न मानकर अपना जीवन कृष्ण-भक्ति में लगा दिया। इनमें रसखान का नाम जो दिल्ली के पठान थे, अत्यन्त प्रसिद्ध है। गोसाईं बिट्ठलदास जी ने इन्हें वैष्णव धर्म की दीक्षा दी थी। इनकी भाषा अत्यन्त सरल और मधुर है। भावनाएँ लालित्य और अनुभूति से भरी हुई होती हैं। इनका रचना-काल सम्वत् १६४० के बाद माना जाता है। इनके 'प्रेम-वाटिका' और 'सुजान रस-खान' नाम की दो पुस्तकें हैं।

उदाहरण—

कानन दै अंगुरी रहिबो जबहीं मुरली-धुनि मंद बजैहै।
मोहिनी ताननसों रस खानि अटा चढ़ि गोधन गैहै तो गैहै॥
टेरि कहौं सिगरे व्रज लोगनि काल्हि कोऊ कितनो समुझैहै।
माई री, वा मुख की मुसकानि सम्भारी न जैहै है न जैहै॥

ध्रुवदास

ध्रुवदास इस धारा के बहुत सफल कवि हुए हैं। सुनते हैं स्वप्न में ये हितहरि वंश के शिष्य बने थे। इनका रचना-काल सम्वत १६६० से १७०० तक माना जाता है। सब मिला कर इनके ४० ग्रन्थ उपलब्ध हुए हैं। इससे ज्ञात होता है कि इन्होंने बहुत विस्तृत काव्य-रचना की है। इन्होंने दोहे, चौपाई, कवित्त, सवैया, कुण्डलिया आदि अनेक छन्दों का प्रयोग किया है। इनकी अनेक रचनाएँ अत्यन्त सुन्दर और सरस हैं। उदाहरण—

जीव-दशा कछु इक सुन भाई।
हरि-जस-अमरत तजि बिसराई॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

छिन भंगुर यह देह न जानी।
उलटी समझि अमर ही मानी॥
घर-घरनी के रंग यो राच्यो।
छिन–छिन में नट-कपि ज्यों नाच्यो॥
माया-मुख में यों लपटान्यो।
विषय स्वादु ही सरबसु जान्यो॥
काल समय जब आनि तुलानो।
तन मन की सुधि तबै भुलानो॥

इसके बाद कृष्ण-भक्ति-धारा मन्द पड़ गई। आगे अनेक कृष्ण-भक्त हुए हैं जिन्होंने कविता की इस परिपाटी को कायम रखा है। कृष्णगढ़ नरेश महाराज नागरीदास, अलबेली अलि जी, चाचा रहित वृन्दावनदास जी, भगवत् रसिक आदि अनेक भक्त होते रहे जिन्होंने सुन्दर और सरस रचनाएँ की हैं। फिर भी आगे के समय में दूसरी धाराएँ इतनी प्रबल हो गईं कि इन रचनाओं की प्रमुखता नहीं रही। इसलिए इस धारा का यहीं अन्त माना जाता है।

कृष्ण-भक्ति-धारा की सभी रचनाएँ, केवल मीराबाई के पदों को छोड़कर, शुद्ध व्रजभाषा की हैं। व्रजभाषा का माधुर्य्य और लालित्य दूसरी प्रांतीय भाषाओं से कहीं अधिक कविता की भाषा बनने का अधिकारी था। इसलिये आगे चल कर यही कविता की प्रधान भाषा बन गई। मीरा ने भी जिनकी भाषा में राजस्थानी का अधिक समावेश था व्रजभाषा से बहुत कुछ लिया है। उनकी रचनाओं में व्रज और राजस्थानी का मिश्रण है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

भक्ति-काल

राम-भक्ति-धारा

कृष्ण-भक्ति और राम-भक्ति की धाराएँ हिन्दी-साहित्य में साथ-साथ ही बही हैं। जिस तरह सूरसागर उस धारा का अत्यन्त सुन्दर काव्य है, उसी तरह राम-चरित मानस विश्व के साहित्य में अपनी कोटि का एक ही काव्य ग्रन्थ है।

देशमें विष्णु-भक्ति का प्रचार करनेवाले स्वामी रामानुजाचार्य हुए हैं। स्वामी शंकराचार्य के अद्वैतवाद में सर्वसाधारण को भक्ति और मनः शान्ति के लिये कोई आधार नहीं मिलता था। इसलिए रामानुजाचार्य ने जब विष्णु की उपासना का मार्ग चलाया तो वह बहुत जल्दी जनता के हृदय में घर कर गया।

रामानन्द

इन्हीं रामनुजाचार्य के चलाए हुए वैष्णव सम्प्रदाय में स्वामी रामानन्द जी हुए। इन्होंने सम्पूर्ण भारत में भ्रमण करके अपने सिद्धान्तों का प्रचार किया। इन्होंने अपने पुराने आचार्यों के मत में थोड़ा भेदकर दिया। विष्णु के स्थान पर विष्णु के अवतार श्री राम की उपासना पर ज़ोर दिया। पहले रामानुज सम्प्रदाय में द्विजातियों को ही दीक्षा दी जाती थीं, पर रामानन्द जी ने उसका द्वार मनुष्य मात्र के किए खोल दिया। कबीर जैसे मुसलमान परिवार में पले और रैदास जैसे अछूत कुल में उपजे, लोगों को भी राम-भक्त बनने का अधिकार मिला। यह सब स्वामी रामानन्द जैसे उदार महात्माओं के प्रभाव से ही हुआ। स्वामी रामनन्द विक्रम

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

की १५वीं शताब्दी में, सम्वत् १४२५ से १४५६ के बीच वर्तमान थे। इन्होंने अपने सम्प्रदाय-सम्बन्धी ग्रंथ संस्कृत में लिखे हैं किन्तु कुछ पद हिन्दी में भी प्राप्त होते हैं। उदाहरण—

आरत कीजै हनुमान लला की।
दुष्ट दलन रघुनाथ कला की॥
जाके बल भरते महि काँपे।
रोग सोग जाकी सीमा न चांपे॥
अंजनी सुत महा बलदायक।
साधु सन्त पर सदा सहायक॥
बाएँ भुजा सब असुर सँहारे।
दहिने भुज सब सन्त उबारे॥

तुलसीदास

रामभक्ति-धारा के सब से प्रमुख कवि गोस्वामी तुलसीदास हुए हैं। इनका जन्म सम्वत् १५५४ में हुआ था। इनके पिता रामगुलाम सरयूपारी ब्राह्मण थे। इनकी माता का नाम हुलसी था। रहीम ने इनके विषय में कहा है।

गोद लिए हुलसी फिरे, तुलसी सो सुत होय।

तुलसीदास जी के जन्म के समय की अनेक रहस्य भरी बातें कही जाती हैं। कुछ लोग कहते हैं ये मूल नक्षत्र में उत्पन्न हुए थे, इसलिए माता ने इन्हें त्याग दिया था। वेणीमाधवदास ने लिखा है कि इन्होंने जन्मते ही 'राम' नाम का उच्चारण किया और इनके पूरे दांत थे। इससे इन्हें राक्षस समझ कर घर वालों ने इनकी

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

उपेक्षा की, पर माता ने उन्हें मुनिया नाम की दासी को पालन-पोषण के लिये दे दिया। इन बातों का साहित्य के साथ कोई सम्बन्ध नहीं,इसलिये हम इन बातों को भक्तों के लिये छोड़ते हैं।

ये प्रारम्भ से ही अत्यन्त भावुक थे। इसी भावुकता का परिणाम था कि ये पत्नी को बहुत प्यार करते थे। एक दिन इनकी पत्नी ने कहा कि जितना प्यार तुम मुझे करते हो उतना ही यदि भगवान से करते तो कितना अच्छा होता। यहीं से उनके जीवन में परिवर्तन आया। ये घर छोड़ गए और काशी में विरक्त होकर रहने लगे।

गोस्वामी तुलसीदास का हिन्दी काव्य-जगत् में प्रवेश वास्तव में एक क्रांति थी। उन्होंने शैली, भाषा और भाव सभी में क्रांतिकारी परिवर्तन किए। उनकी अनुभूति की गहराई ने नई भाषा, नई शैली और नवीन भावनाओं में ऐसी जान डाली कि इनके काव्य के आगे सभी प्राचीन साहित्य फीका लगने लगा।

इन्होंने पूरबी हिन्दी और खड़ी बोली के मिश्रण से नई ही भाषा का सृजन किया। जिस तरह कृष्ण-भक्ति का केन्द्र व्रज है उसी तरह राम-भक्ति का अवध। कृष्ण-भक्ति धारा के कवियों ने व्रज भाषा में रचना की है। किन्तु तुलसीदास की भाषा में अवधी का बाहुल्य है। तुलसीदास अत्यन्त प्रतिभा संपन्न कवि थे। यह बात नहीं कि उनका व्रज-भाषा पर अधिकार नहीं था। उनकी गीतावली और कृष्ण गीतावली व्रजभाषा उज्ज्वल उदाहरण हैं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सूरदास जी ने केवल मुक्तक गीत लिखे हैं किन्तु तुलसीदास का रामचरित् मानस एक प्रबन्ध काव्य है। तारीफ़ यह है कि इतने बड़े काव्य में ज़रा भी कहीं शिथिलता नहीं है। काव्य कला के उच्चतम गुण उसमें हैं। इन्होंने 'रामचरित् मानस' में हिन्दूसंस्कृति का सजीव चित्रण किया है। नीति सम्बन्ध उपदेश भी इसमें हैं। इस महा काव्य की मनोहरता का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है कि भारत वर्ष के प्रत्येक घर में यह ग्रन्थ पाया जाता है। मानव-जीवन के प्रत्येक पहलू पर इस ग्रन्थ में विचार किया गया है। पिता-पुत्र, पति-पत्नी, बन्धु-बन्धु, मित्र-मित्र, शत्रु-शत्रु स्वामी-नौकर और राजा-प्रजा आदि के पारस्परिक सम्बन्धों का सुन्दर विश्लेषण इस ग्रंथ में है। इतने विषयों को छूते हुए भी भक्ति की प्रधान धारा ज़रा भी मन्द नहीं पड़ी है।

गोस्वामी तुलसीदास जी के बारह ग्रंथ प्रसिद्ध हैं। दोहावली, कवित्त रामायण, गीतावली, रामचरित् मानस, रामाज्ञा प्रश्नावली, विनय पत्रिका, रामलला नहछू, पार्वती मंगल, जानकी मंगल, बरवैरामायण, वैराग्य संदीपिनी, और कृष्ण गीतावली।

उदाहरण—

एतना कहत नीति रस भूला। रन-रस-विटपु पुलक मिस फूला॥
प्रभु पद बन्दि सीस रज राखी। बोले सत्य सहज बलु भाखी॥
(रामचरित मानस)

अवधेश के द्वारे सकारे गई, सुत गोद कै भूपति लै निकसे।
अवलोकि हौं सोच विमोचन को, ठगि सी रही जो न ठगे धिक से।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

तुलसी मन रञ्जन रञ्जित अञ्जन नयन सुखञ्जन जातक से।
सजनी ससि में समसील उभै, नवनील सरोहर से विकसे ॥
(कवितावली)

झोलत राम पालने सोहैं, भूरि भाग जननी जन जोहैं।
तनु मृदुल मंजुल मेचकलाईं, झलकति बाल विभूषन झाईं ॥
(गीतावली)

गरब करहु रघुनंदन जनि मन मांह।
देखहु आपनि मूरति सिय के छांह ॥
सखि हँसि मिल करि कहि मृदु बैन।
सिय रघुवर के भये उनीदे नैन ॥
(वरवैरामायण)

नाभादास

नाभादास जी अग्रदास के शिष्य थे। इनका भक्त-माल ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध है जिसमें २०० भक्तों के चरित्रों का वर्णन है। इस ग्रंथ में भक्तों के अनेक अलौकिक चमत्कार दिए हैं। इनका राम-भक्ति सम्बन्धी छंदों का एक संग्रह अब मिला है। इन्होंने दो 'अष्टयाम' एक गद्य और एक पद्य में लिखे हैं। गद्य की भाषा ब्रज है। इनकी कविता का उदाहरण नीचे दिया है—

अवधपुरी की सोभा जैसी।
कहि नहिं सकहिं शेष मुनि तैसी ॥
रचित कोट कल धौत सुहावन।
बिविध-रंग मति अति मन भावन ॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

चहुं दिसि विपिन प्रमोद अनूपा।
चतुरबीस जोजन रसरूपा॥
सुदिसि नगर सरजू सरि पावनि।
मनिमय तीरथ परम सुहावनि॥

प्राणचंद चौहान

प्राणचंद चौहान ने सम्वत् १६६७ में रामायण महानन्द नाम का नाटक लिखा है। नाटक तो क्या यह कथोपकथन में रामचरित का वर्णन है। इनकी रचना का उदाहरण नीचे दिया जाता है।

आदि पुरुष वरनौं केहि भांती।
चांद सुरज तहँ दिवस न राती॥
निरगुन रूप करै सिव ध्याना।
चार वेद गुन जोरि बखाना॥
तीनों युग जानै संसारा।
सिरजै पालै भंजन हारा॥
श्रवण बिना सो अस बहुगुना।
मनमें होइ सो पहले सुना॥
देबै सब पै आहि न आंषी।
अंधकार चोरी के साषी॥
तेहि कर दुहुँको करै बषाना।
जिहिकर मर्म वेद नहिं जाना॥
माया सींव को कोउ न पारा।
शंकर पँवरि बीच होइ हारा॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

संवत १६२० में हृदयराम नाम के एक पञ्जाब-निवासी राम-भक्त ने संस्कृत के हनुमन्नाटक के आधार पर हिंदी नाटक लिखा है। इसके सम्वाद कवित्त और सवैयों में हैं। इनकी भाषा सुन्दर, सरस और परिमार्जित है। उदाहरण

हृदयराम

जानकी को मुख विलोक्यों ताते कुण्डल,
न जानत हौं, वीर पांय छुवै रघुराई के।
हाथ जो निहारे नैन फूटियो हमारे,
ताते कंकन न देखे, बोल कह्यो सतभाई के॥
पायँन के परिवै को जाते दास लछिमन,
याते, पहिचानत हैं भूषण जे पायँ के॥
बिछुआ है एई, अरु झंझांर है एई जुग,
नूपुर हैं एई राम जानत जराइ के॥

रामभक्ति धारा के कवियों की यह भी विशेषता है कि इन्हों ने न केवल भाषा, बल्कि शैलियों में विभिन्नता लाने का प्रयत्न किया है। मुक्तक गीत, प्रबन्ध काव्य, कथोपकथन और नाटक आदि अनेक प्रकार की रचनाएँ लिख कर साहित्य को विस्तार दिया, उस के विविध अंगों को पुष्ट किया।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

भक्ति-काल

अन्य कवि

हमने वीर काल का परिचय देते समय बतलाया था कि एक समय में केवल एक ही प्रकार का साहित्य-लिखा जाता हो ऐसा कभी नहीं होता न हो सकता है। वीर-काल में भी शृङ्गार और नीति-सम्बन्धी रचनाएँ होती रही हैं, उसी तरह भक्ति-काल में भी शृङ्गार, नीति और वीर-रस सम्बन्धी रचनाएँ होती रहीं। जो साहित्य शुद्ध-भक्ति-सम्बन्धी था उसका परिचय हम दे चुके हैं, इस काल के दूसरे साहित्य का परिचय देना भी आवश्यक है।

इस समय साहित्य के रसिक दो थे। एक जनता दूसरे राज-दरबार। सन्तों और भक्तों का साहित्य बिना राज्याश्रय के पनपा है, वह जनता के पथ-प्रदर्शक साधु-सन्तों की वाणी थी, उसे राजदरबार की वाहवाही और पुरस्कारों की अपेक्षा नहीं थी। इन रचनाओं ने जनता के हृदय में अपना अनुपम स्थान बना लिया। आज वे रचनाएँ जो राज्याश्रय में फली-फूली थीं उतनी प्रिय नहीं रहीं जितनी कि जनता के श्रद्धा और प्रेम का रस पीकर बढ़ने वाली।

इस काल में सम्राट अकबर, ओरछा के महाराज तथा अन्य राजाओं ने हिंदी-साहित्य को खूब प्रोत्साहन दिया। वह युग भी सुख-शांति का था, इसलिए काव्य, सङ्गीत और चित्रकला की खूब उन्नति हुई।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अकबर के दरबार में नरहरि, गंग, रहीम ख़ानखाना, टोडर-मल, बीरबल, मनोहर जैसे कवि मौजूद रहते थे। और भी कवियों और कलाविदों को अकबर के दरबार से प्रोत्साहन और पुरस्कार मिलता ही रहता था। इसी प्रकार ओरछा के दरबार में बलभद्र मिश्र, और केशवदास जैसे प्रकांड पण्डित और सुकवियों को स्थान मिला था। यह प्राचीन हिंदी-साहित्य का सब से पवित्र और सब से मनोहर काल था। इस काल में हुए कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, केशव, रहीम, गङ्ग, सेनापति आदि सुकवि अपने-अपने क्षेत्र में अपना सानी नहीं रखते। इस समय साहित्य इतनी बहुमुखी धाराओं में प्रवाहित हुआ, भाषा में ऐसा परिवर्तन आया, शैलियों की विभिन्नता इतनी देखने में आई कि आश्चर्य होता है। प्राचीन साहित्यिक भाषा जो केवल राजदरबारों में समझी जा सकती थी वह साहित्य के क्षेत्र से निर्वासित हो गई और उसके स्थान पर सन्तों ने खड़ी बोली, कृष्णभक्तों ने व्रजभाषा और रामभक्तों ने अवधी जैसी जन-साधारण की भाषाओं को अपनाकर साहित्य को घर-घर में पहुँचा दिया।

केवल भाषा में ही नहीं विषय और शैली में भी बड़ी क्रांति हुई। जायसी जैसे प्रेमी कवियों ने प्रेम-गाथाएँ लिखीं, सूरदास ने गीत लिखे, तुलसीदास ने प्रबन्ध काव्य लिखा, केशवदास ने रीति ग्रंथ लिखे, कुछ कवियों ने नाटक लिखे और गद्य भी थोड़ा-बहुत इस काल में लिखा गया। इसलिए हिंदी का वास्तविक

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

विकास इसी युग में प्रारम्भ हुआ, प्रारम्भ ही नहीं हुआ बल्कि कई विभागों में तो चरमोत्कर्ष को पहुँच गया।

इस काल के सन्त, प्रेमी और भक्त कवियों के परिचय हम दे चुके हैं। अब अन्य कवियों से भी पाठकों की पहचान करा दें।

कृपाराम

१५७५ में छीहल नाम के एक राजस्थानी कवि ने, पंच-सहेली नाम की, राजस्थानी मिली भाषा में एक दोहों की पुस्तक लिखी थी। सम्वत् १५८५ में रायबरेली के हलवाई लालदास ने 'हरिचरित्र' और 'भागवत दशमस्कंध' नामक दो पुस्तकें लिखीं। इन दोनों कवियों की रचनाएँ साहित्यिक दृष्टि से कुछ महत्व नहीं रखतीं। सम्वत् १५६८ में कृपाराम मिश्र नाम के एक कवि ने 'हित-तरङ्गिनी' नाम का एक रीति-ग्रंथ लिखा। यह दोहों में है। दोहे सुन्दर हैं।

नरहरि

असनी-फतहपुर निवासी नरहरि बन्दीजन का अकबर के दरबार में बहुत मान था। इनके एक छप्पय को सुन कर सम्राट अकबर ने गोबध बन्द करा दिया था। इनके तीन ग्रंथ मिलते हैं रुक्मिणी-मङ्गल, छप्पय नीति और कवित्त संग्रह।

नरोत्तमदास

इसी समय में हुए नरोत्तमदास के 'सुदामा-चरित' ग्रंथ से हिंदी-जगत् भली-भाँति परिचित है। यह छोटीसी रचना अत्यन्त सरल, सरस और हृदयग्राही है। इन्होंने एक और ग्रंथ 'ध्रुव-चरित्र' लिखा था। वह नहीं मिलता यह हिंदी का दुर्भाग्य ही समझना चाहिए। नीचे

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

उदाहरण से इनकी सरस प्रभावपूर्ण, प्रवाहपूर्ण और मनोहर रचना का परिचय मिलेगा।

सीस पगा न झगा तन में, प्रभु, जानै को आहि, बसै केहि ग्रामा।
धोती फटी-सी लटी दुपटी, अरु पायँ उपानह को नहिं सामा॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल एक, रह्यो चकि सो बसुधा अभिरामा।
पूछत दीनदयाल को धाम बतावत आपनो नाम सुदामा॥

सुदामा की दरिद्रता का कैसा सजीव वर्णन है। हृदय पढ़ते ही सहानुभूति से भर जाता है।

अकबर के दरबार के महाराज टोडरमल के भी फुटकर छन्द मिलते है। इन्होंने भी हिंदी में कविता की है। किंतु कवि के रूप में महाराज बीरबल उनसे बाजी मार ले गए हैं। यह अकबर के एक मन्त्री थे। बहुत ही वाक्‌चतुर। सुनते हैं इन्होंने केशवदास जो को एक बार छै लाख रुपये दिये थे। इनके सौ फुटकर कवित्तों का एक संग्रह भरतपुर में है।

बीरबल

इसी समय में गंग बहुत प्रतिभा-सम्पन्न कवि हुए थे। इनका अकबर के दरबार में बड़ा मान था। रहीम खान-खाना ने इन्हें छत्तीस लाख रुपये भेंट किये थे। ये बड़े स्वाभिमानी और स्पष्टवक्ता थे, इसलिये किसी नवाब ने इन्हें हाथी द्वारा मरवा डाला।

गंग

दुर्भाग्य की बात है कि इनकी कोई पुस्तक अभी तक उपलब्ध नहीं हुई। जो फुटकर छन्द इनके मिलते हैं उनसे इनकी असाधारण प्रतिभा का परिचय मिलता है। वीर, शृङ्गार और नीति

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सभी प्रकार की रचनाएँ इन्होंने पूर्ण सफलता से की हैं। इनकी परिमार्जित ओजपूर्ण और सरस भाषा, वाक्य-रचना नैपुण्य, व्यंग लिखने की पटुता, अतिशयोक्तियाँ अप्रतिम हैं। उदाहरण—

बैठी थी सखिन संग पिय को गवन सुन्यो,
सुख के समूह में वियोग आगि भर की।
गंग कहै त्रिविध सुगंध लै पवन बह्यो,
लागत ही ताके तन भई बिथा जर की।
प्यारी को परसि पौन गयो मानसर कहँ,
लागत ही औरै गति भई मानसर की।
जलचर जरे औ सेबारि जरि छार भयो,
जल जरि गयो, पंक सूख्यो, भूमि दर की।

मनोहर

अकबर के दरबार में रहने वाले मनोहर कवि उर्दू फ़ारसी के भी विद्वान थे। फ़ारसी में इन्होंने 'तौसनी' उपनाम से रचना की है। हिंदी में नीति तथा शृङ्गार के दोहे शतप्रश्नोत्तरी पुस्तक में कहे हैं। उदाहरण—

अचरज मोहिं हिंदु तुरुक वादि करत संग्राम।
इक दीपति सों दीपियत काबा कासी धाम॥

बलभद्र मिश्र

बलभद्र मिश्र का जन्म सम्वत् १६०० के लगभग हुआ था। ये हिन्दी के प्रसिद्ध कवि केशवदास के बड़े भाई थे। इनका 'नख-शिख' शृङ्गाररस का सुन्दर ग्रंथ है। नायिका के अंगों का इस ग्रंथ में वर्णन है। इनकी एक पुस्तक दूषण-विचार भी है। इनकी नख-

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
शिख पुस्तक के टीकाकार गोपाल कवि ने तीन ग्रंथ बलभद्री व्याकरण, हनुमन्नाटक, और गोवर्धन सतसई का उल्लेख किया है। इनकी कविता पांडित्य, और प्रौढ़तापूर्ण थी।

केशव

केशवदास अपने पाण्डित्य और रचना-चातुर्य्य की धाक ज़माने पर जमा गए हैं। इनका जन्म संवत १६१२ में और मृत्यु १६७४ के लगभग हुई। ओड़छा के महाराज रामसिंह के भाई इन्द्रजीत सिंह की सभा में ये रहते थे। इन्होंने अलंकार, रस, आदि काव्यांगों को समझाने के लिये ग्रन्थ लिखे हैं। इन्होंने साहित्य को शास्त्रीय रूप देने का श्री गणेश किया था। ये रसवादी नहीं अलंकारवादी थे। क्या कहा जाता है, इस पर इनका ज़्यादा ध्यान नहीं रहता था, बल्कि किस प्रकार कहा जावे इस बात पर रहता था। इसीलिये इनकी पुस्तकें साहित्य की शास्त्रीय परिभाषाओं और पांडित्य की दृष्टि से बहुत उत्कृष्ट होते हुए भी सरस नहीं हैं। सर्वसाधारण के लिए कठिन भी हैं। फिर भी इन्होंने साहित्य को शास्त्रीय पद्धति में बाँधने का एक बहुत ही दुस्साध्य कार्य किया।

रामचन्द्रिका इनका प्रबन्ध काव्य है। कवि-प्रिया और रसिक प्रिया में अलंकार और रसों का निरूपण है। इनके अतिरिक्त विज्ञान-गीता, वीरसिंहदेव चरित, रतन-बावनी और जहाँगीर-जस चन्द्रिका आदि पुस्तकें भी इन्होंने लिखी थीं। उदाहरण—

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

केशवदास के भाल लिख्यो, विधि रंक को अङ्क बनाय सँवारयो।
धोये धुवै नहिं छूटो छुटै बहु तीरथ जाय कै नीर पखारयो॥
ह्वै गयो रंक ते राव तबै जब बीरबली नृपनाथ निहारयो।
भूलि गयो जग की रचना चतुरानन बाय रह्यो मुख चारयो॥

अकबर के अभिभावक बैरम खाँ के सुपुत्र अब्दुल रहीम खान खना सोलह आना कवि थे। बैरम खाँ की वीरता चाहे संसार भूल जावे लेकिन रहीम की दानशीलता, काव्य-चातुरी, और सहृदयता को कभी नहीं भूल सकता। कवि गंग को इन्होंने एक बार छत्तीस लाख रुपये दे डाले थे। इन्हीं रहीम को अन्तिम दिनों में, जब जहांगीर ने इनकी जागीर छीन ली आर्थिक कष्ट उठाने पड़े, यह विधि की विडम्बना ही है। उस समय रहीम ने दुखी होकर कहा था।

रहीम

ये रहीम दर दर फिरें, माँगि मधुकरी खाहिं।
यारो यारी छाँड़िये, अब रहीम वे नाहिं॥

रहीम का उस समय के सभी सुकवियों और साहित्यकों से खूब घनिष्ट सम्बन्ध था। तुलसीदास और गङ्ग से तो इनकी अत्यन्त आत्मीयता थी। इन्हें संसार का सभी प्रकार का ज्ञान था। अकबर के समय में इन्होंने कई युद्धों का नेतृत्व भी किया था। संसार के सभी प्रकार के उतार-चढ़ाव देखे थे। यह जनता के दैनिक जीवन से भली-भाँति परिचित थे। सब प्रकार की 'अनुभूति' के धनी थे। इसीलिए इनकी रचनाएँ अत्यन्त लोक-प्रिय हुईं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

इनकी कविता की विशेषता यह है कि वे अत्यन्त सरल, स्वाभाविक और वास्तविक हैं। सीधी हृदय में घर करती हैं। इनके दोहे सर्व-साधारण की ज़बान पर चढ़े हुए हैं।

इनका 'बरवे नायिका-भेद' अवधी भाषा का सुन्दर काव्य है। इनकी 'रहीम दोहावली' पुस्तक के दोहे बहुत मार्मिक और सरस हैं। इनके अतिरिक्त इन्होंने शृङ्गार-सोरठ, मदनाष्टक, रास पंचाध्यायी आदि ग्रंथ लिखे हैं। उदाहरण—

चित्रकूट में रमि रहे, रहिमन अवध नरेश।
जापर बिपदा परति है, सो आवत यहि देश॥
जिहि रहीम चित आपनो, कीन्हों चतुर चकोर।
निशिवासर लागो रहै, कृष्ण चन्द्र की ओर॥

लै कर सुघर खुरुपिया, पिय के साथ।
छइबै एक छतरिया बरसत पाथ॥
सघन कुन्ज अमरैया, सीतल छांह।
झगरत आए कोइलिया, पुनि उड़िजाइ॥

इस समय के कादिर बख्स और मुबारिक नामके मुसलमान कवियों की रचनाएँ भी प्रसिद्ध हैं। इनमें मुबारिक

मुबारिक

ज्यादा सिद्ध-हस्त कवि थे। इन्होंने नायिका के दस अङ्ग पर सौ-सौ दोहे लिखे हैं। इनकी उत्प्रेक्षा सुन्दर होती है। उदाहरण—

परी मुबारक तिय-बदन अलक ओप अति होय।
मनो चन्द की गोद में रही निसा सी सोय॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

जौनपुर के जैन जौहरी बनारसी दास हिन्दी के अच्छे कवि हुए हैं। इनका जन्म १६४३ में हुआ था। पहले ये श्रृङ्गार रस की रचनाएँ करते थे, लेकिन बाद में ज्ञान-सम्बन्धी करने लगे। इनकी बनारसी विलास, नाटक-समय-सार, नाम-माला अर्द्धकथानक, बनारसी पद्धति, मोक्ष पदी, ध्रुव वंदना, कल्याण-मन्दिर भाषा, वेद-निर्भय पंचाशिका, मारगन विद्या पुस्तकें मिली हैं।

बनारसीदास

सेनापति भी हिन्दी के बहुत सिद्धहस्त कवि हुए हैं। इनका जन्म १६४६ के आस पास हुआ था। इनके ऋतु वर्णन को कोई कवि नहीं पा सका। इनकी रचनाओं में रस और अलङ्कार दोनों का समान समावेश हुआ, इसीलिये प्रवाह में बाधा न डालकर कविता चमत्कृत हो उठी है। इनके 'कवित्त-रत्नाकर' और 'काव्य कल्पद्रुम' नाम के दो काव्य प्रसिद्ध हैं। उदाहरण—

सेनापति

वृष को तरनि, तेज सहस्त्रौ किरनि कर,
ज्वालनि के जाल विकरालु बरसतु है।
तचति धरनि, जग जरत धरनि, सोरो,
छांइ को पकरि पथ पंथी बिरमतु है।
सेनापति नेक दुपहरो के ढरकत होतु,
घमका विषम यों न पात खरकतु है।
मेरे जान पौनो सीरे ठौर को पकरि कोनो,
घरी एक बैठि कहूँ घामै बितवतु है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

इस काल में हुए पुहकर कवि के रस-रतन नामक ग्रन्थ का अपना अलग स्थान है ! यह ग्रन्थ काल्पनिक कथानक है। इसमें रंभावती और सूरसेन की प्रेम-कथा कई प्रकार के छन्दों में कही गई है। यह ग्रन्थ जायसी आदि की रचनाओं से इसलिए भिन्न हैं कि यह विदेशी परिपाटी पर न होकर भारतीय परिपाटी पर लिखी गई है। इनकी कविता-प्रौढ़ और सरस है।

पुहकर

ग्वालियर के कवि सुन्दर के 'सुन्दर शृंगार' 'सिंहासन-पचीसी' और 'बारह मासा' नामक तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। इनकी कविता में शब्द-चातुर्य्य और अलङ्कारों की विशेषता पाई जाती है।

सुन्दर

इसी प्रकार इस काल में और अनेक कवि हुए। सभी का परिचय देना असम्भव है। सन्त और भक्त कवियों को छोड़ कर अन्य केशव, सेनापति, गङ्ग आदि कवियों की रचनाओं को देखने से यह जान पड़ता है कि धीरे-धीरे भक्ति-धारा समाप्त होने लगी और शृंगार-रस को रचनाओं का ज़ोर बढ़ने लगा था। साहित्य को शास्त्रीय पद्धति में बाँधने की ओर भी प्रवृत्ति बढ़ रही थी। इसीलिए आगे रीति-काल प्रारंभ हुआ।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

रीति काल

विक्रम की १८वीं और १९वीं शताब्दी में रीति-ग्रन्थों के लिखने का ज़ोर रहा। इस काल तक हिन्दी का कविता-साहित्य खूब पुष्ट तथा उन्नत हो चुका था। उसमें सुन्दर-सुन्दर ग्रन्थ विपुल परिमाण में लिखे जा चुके थे। अब साहित्यकों का ध्यान काव्यांगों के लक्षण करने की ओर गया, काव्य-रचना की रीति निर्धारित करने की ओर गया। इसीलिए यह रीति-काल कहलाया। इस काल के कवियों ने छन्द, अलङ्कार, रस, नायक-नायिका आदि के विविध भेद किए, उनके लक्षण लिखे और उदाहरण रचे। इस काल के प्रायः सभी कवियों ने काव्य के विविध अङ्गों को लेकर ग्रन्थों की रचना की है। कोई ग्रन्थ छन्दों के निरूपण के लिये, कोई अलङ्कारों के भेद बताने के लिए, कोई रसों का परिचय देने के लिये तो कोई नायक-नायिका के भेद दिखाने के लिए लिखे गये। इस तरह रीति-ग्रन्थों की भरमार हो गई।

काव्य की रीतियों का निरूपण करने के लिये संस्कृत में अच्छे ग्रन्थ हैं और केशवदास जी ने दण्डी और रूप्यक का अनुकरण किया था, किन्तु आगे के कवियों ने चन्द्रालोक और कुवलयानन्द को अपना आधार बनाया। संस्कृत साहित्य की यह विशेषता है कि उसके कवि अलग और आचार्य अलग हैं। कवियों ने रचनाएँ लिखीं और आचार्यों ने उनमें रस, अलङ्कारों तथा काव्य के अन्य भेदों का निरूपण किया, किन्तु हिन्दी के रीतिकाल के कवि स्वयं ही आचार्य बने और स्वयं ही कवि।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

उन्होंने स्वयं काव्यांगों की परिभाषाएँ लिखीं और स्वयं उसके उदाहरण लिखे।

ऐसा करने से यह हुआ कि काव्यांगों की विवेचना उचित और विस्तृत रूप से न हो सकी। कवि-गण उदाहरणों में अपनी काव्य-प्रतिभा का चमत्कार तो दिखा सके, लेकिन लक्षण अच्छी तरह नहीं समझा सके। कहीं-कहीं परिभाषाएँ अशुद्ध था अपूर्ण हैं और कहीं उदाहरण ग़लत दिए हैं। दूसरी बात यह है कि उस समय गद्य का साहित्य में प्रवेश नहीं हो पाया था। इसीलिए परिभाषाएँ भी पद्य में लिखी गईं। पद्य में परिभाषाएँ लिखने से काव्यागों का विशद विवेचन नही हो सका।

इस काल के कवियों ने काव्यांगों का निरूपण तो किया, किन्तु भाषा के परिमार्जन की ओर ध्यान नहीं गया। एक ही शब्द को भिन्न २ कवियों ने भिन्न २ रूपों में लिखा, अनुप्रासों के फेर में पड़ कर शब्दों को बुरी तरह तोड़ा-मरोड़ा, क्रियाओं का प्रयोग भी मन माने ढंग पर किया। यदि उस समय की साहित्यिक भाषा को किसी व्याकरण से बांधने का प्रयत्न किया जाता तो सम्भवतः उस समय का साहित्य आगे के काल के लिये भी समझने में आसान रहता।

इस समय तक हिन्दी की कविता खूब प्रोढ़ हो चुकी थी, रीति-काल में सैकड़ों कवियों ने सुन्दर रचनाएँ की हैं। उन सभी कवियों का इस छोटी सी पुस्तक में परिचय देना सम्भव नहीं है। उस काल के विशेष कवियों का परिचय यहाँ दिया जाता है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सम्वत् १५६८ में कृपाराम ने 'हित-तरंगिणी' नामक पुस्तक में रस निरूपण किया था। उनके बाद सम्वत् १६१६ में मोहन लाल मिश्र ने शृंगार-सागर नामक ग्रन्थ लिखा। सम्वत् १६३७ में कर्णेश कवि ने कर्णाभरण, श्रुतिभूषण, और भूप-भूषण नाम के तीन ग्रन्थ लिखे। बलभद्र मिश्र ने नखशिख तथा रहीम ने वरवै नायिका भेद लिखा। पण्डितवर केशवदास ने रामचन्द्रिका, कवि प्रिया, और रसिक प्रिया नामक ग्रन्थ लिखे। इनके बाद ५० वर्ष तक कोई उल्लेखनीय रीति-ग्रन्थ नहीं मिलता, इसलिये हिन्दी-साहित्य के इतिहास लेखकों ने रीति-काल केशव के काल से न मानकर उसके ५० वर्ष बाद से माना है। केशव के काल के आस-पास रीति-ग्रन्थों के लिखने की प्रवृत्ति अंकुरित हो रही थी, किन्तु बाद में तो इन ग्रन्थों की मूसलाधार वर्षा होने लगी और इस प्रकार की कविताओं के मेघों ने हिन्दी के साहित्याकाश को छा लिया।

चिंतामणि

तिकवांपुर निवासी रत्नाकर त्रिपाठी के चार पुत्र थे—चिंतामणि, भूषण, मतिराम तथा जटाशंकर। चारों ही कवि थे किंतु पहले तीन तो हिंदी-साहित्य में अपना अमर स्थान बना गए हैं। चिंतामणि का जन्म १६६६ में हुआ था। इन्होंने सम्वत् १७०० में 'कवि-कल्पतरु' नामक ग्रन्थ लिखा है। ये बहुत दिनों तक नागपुर के भोसला राजा मकरंदशाह के आश्रय में रहे और 'छन्द विचार' नाम का एक पिंगल-ग्रन्थ लिखा। बाबू रुद्रसाहि सोलंकी, सम्राट

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

शाहजहां, और जैनदीं अहमद ने भी इन्हें पुरस्कार दिए थे। इनके काव्य-विवेक, काव्य-प्रकाश, और रामायण नामक ग्रन्थ भी मिलते है। ये बहुत उत्कृष्ट कवि थे, इनकी भाषा विशुद्ध ब्रज है, जो खूब लालित्य, सरसता और प्रवाह से भरी हुई हैं। इन्होंने काव्य के प्रायः सभी अंगों पर पुस्तकें लिखी हैं। उदाहरण—

सरद ते जल की ज्यों दिन में कमल की ज्यों,
धन तें ज्यों थल की निपट सरसाई है।
घन तें सावन की ज्यों आप तें रतन की ज्यों,
गुन तें सुजन की ज्यों परम सुहाई है।
चिंतामनि कहै आछे अच्छरन छंद की ज्यों,
निसागमचंद की ज्यों दृग सुखदाई है।
नग तें ज्यों कंचन बसन्त तें ज्यों बन की,
यों जोबन ते तन की निकाई अधिकाई है।

भूषण अन्यन्त लोक-प्रिय कवि हुए हैं। इस काल में प्रायः सभी कवियों ने शृङ्गार-रस की भरमार की है, भूषण इसके अपवाद हैं। इन्होंने यद्यपि रीति-ग्रन्थ लिखे हैं, लेकिन उनमें जो उदाहरण दिये हैं वे वीरवर शिवा जी की वीरता और यश-वर्णन में लिखे मुक्तक छन्द हैं। बुन्देलखण्ड के उद्धारक छत्रसाल की वीरता और कीर्ति को भी इन्होंने अपनी कविता का विषय बनाया। वास्तव में ये हिंदुओं के जातीय कवि थे। ये पहले चित्रकूत्र के राजा हृदयराम सोलंकी के पुत्र रुद्रराम के आश्रय में रहे, उसके बाद औरङ्गज़ेब

भूषण

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

के यहां भी रहे, उसके बाद शिवाजी के पास पहुँचे। शिवा जी ने इनके एक छन्द पर कई लाख रुपये भेंट किए थे। ये कुछ दिनों के लिए महाराजा छत्रसाल के पास भी गए थे।

इनका जन्म संवत १६७० में और मृत्यु संवत १७७२ के लगभग अनुमान की जाती है। ये अत्यन्त प्रतिभाशाली कवि थे। इनकी भाषा यद्यपि कई स्थानों पर त्रुटिपूर्ण रही, फिर भी इनकी ओजस्वी रचनाएँ उस काल के साहित्य में अप्रतिम हैं। उदाहरण —

इन्द जिमि जम्भ पर बाड़व सुअम्भ पर
रावन सदम्भ पर रघुकुल राज है।
पौन बारि बाह पर शंभु रतिनाह पर
ज्यों सहस्त्र बाहु पर राम द्विजराज है।
दावा द्रुम दण्ड पर चीता मृग झुण्ड पर
भूषण वितुण्ड पर जैसे मृगराज है।
तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर
त्यों मलिच्छ बंस पर सेर सिवराज है।

मतिराम

मतिराम का जन्म सम्वत् १६७४ और मृत्यु १७७३ के लगभग हुई। ये बूंदी के महाराज भाऊसिंह के आश्रय में रहते रहे। इनके 'ललित ललाम' 'छंद-सार', 'साहित्य-सार', 'लक्षण-शृङ्गार' और 'मतिराम सतसई' पुस्तकें प्रसिद्ध हैं। ये शृङ्गार-रस के बहुत सफल कवि हुए हैं। इनकी कविता स्वाभाविक और सरस है

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

इनकी कविताओं में शब्दांडबर नहीं, स्वाभाविक सौन्दर्य है।
उदाहरण—

गुच्छनि के अंवतंस लसै सिखि पच्छनि अच्छि किरीट बनायो,
पल्लव-लाल समेट छरी कर पल्लव में मतिराम सुहायो।
गुञ्जनि के उर मंजुल हार निकुञ्जनि ते कढ़ि बाहर आयो,
आज को रूप-लखे ब्रजराज को आज ही आँखिन को फल पायो॥

मतिराम की कविताओं में भावनाएँ सजीव हो उठी हैं। इनके रीति-ग्रंथ 'रस राज' और 'ललित ललाम' रस और अलंकार निरूपण के उत्कृष्ट ग्रंथ हैं। इन पुस्तकों से विषय बहुत अच्छी तरह समझ में आ जाता है।

प्रसिद्ध ऐतिहासिक वीर मारवाड़ के महाराजा जसवंतसिंह साहित्य और कला के पोषक, प्रेमी और साधक थे। ये संस्कृत तथा भाषा-साहित्यों के मर्मज्ञ थे। इन की सर्वोत्तम रचना भाषा-भूषण,

जसवंत सिंह

बहुत सुन्दर अलंकार-ग्रंथ है। इस ग्रन्थ से इन के आचार्य्यत्व का पता चलता है। ये कवि की अपेक्षा पंडित और आचार्य्य अधिक थे। भाषा-भूषण के अतिरिक्त इन्होंने, अपरोक्ष-सिद्धांत, अनुभव प्रकाश, आनन्द-विलास, सिद्धांत-बोध, सिद्धांत-सार, प्रबोध-चन्द्रोदय-नाटक लिखे हैं। उदाहरण—

मुख शशि वा शशि सों अधिक उदित जोत दिन राति।
सागर ते उपजी न यह कमला अपर सोहाति॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

बिहारी

रीति-काल के कवियों में बिहारीलाल का नाम ज्वाज्वल्यमान नक्षत्र के समान प्रकाशित है। ये ककोर कुल के चौबे ब्राह्मण थे। इन का जन्म संवत् १६६० में गवालियर के निकट बसुआ-गोविंदपुर में हुआ था। अनुमानत: १७२० में इन की मृत्यु हुई है।

ये जयपुर के महाराज जयसिंह के आश्रय में रहते थे। 'बिहारी सतसई' के समान-शृंगार रस का दूसरा कोई ग्रन्थ हिन्दी में नहीं है। इस ग्रन्थ का महत्व इसी से प्रकट है कि इस पर तीस से अधिक टीकाएँ लिखी जा चुकी हैं और शायद लिखी जाती रहेंगी। इन्होंने रीति काल के अन्य कवियों की भाँति काव्यों के विविध अंगों का निरूपण करने के लिए कोई रीति-ग्रन्थ नहीं लिखा फिर भी इनके दोहों में अलंकार, रस, और नायिका-भेद आदि भरे पड़े हैं। इस लिए ये रीति-काल के ही कवि माने जाते हैं। छोटे-छोटे दोहों में इन्होंने बड़े बड़े भावों को बाँध दिया है। उक्तियाँ हृदय में घर कर लेती हैं भाषा प्रसाद गुण-युक्त है, साथ ही अलंकारिक भी। प्रत्येक दोहे में एक तस्वीर सी खिची मिलती है। इसी लिए इनके दोहों के सम्बन्ध में कहा गया है।

सतसैया के दोहरे ज्यों नावक के तीर।
देखत में छोटे लगें बेधें सकल सरीर॥

इनके दोहों के कुछ उदाहरण यहां दिए जाते हैं।

मेरी भव बाधा हरो राधा नागरि सोय।
जातनु की झांई परे श्याम हरित द्युति होय॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अधर धरत हरि के परत ओठ दीठि पर जोति ।
हरित बांस की बांसुरी इन्द्र-धनुष रँग होति ॥
इन दुखिया अँखियान को सुख सिर जोई नाहिं ।
देखत बने न देखते बिन देखे अकुलाहिं ॥
कनक कनन ते सौ गुनी मादकता अधिकाय ।
वह खाए बौगत नर यह पाए बौराय ॥

देव — देव कवि का रीति-काल के प्रतिनिधि कवियों में बहुत ऊँचा स्थान है । ये सनाढ्य ब्राह्मण थे । इनका जन्म सम्वत् १७३० में इटावा में हुआ था । सुनते हैं इन्होंने ७२ ग्रन्थ लिखे थे लेकिन अभी तक २६ ग्रन्थ मिले हैं । (१) भाव विलास, (२) अष्टयाम, (३) भवानी-विलास, (४) सुजान-विनोद, (५) प्रेम तरङ्ग, (६) राम रत्नाकर, (७) कुशल-विलास, (८) देव चरित्र, (९) प्रेम चन्द्रिका, (१०) जाति-विलास, (११) रस-विलास, (१२) काव्य-रसायन (१३) सुख-सागर-तरङ्ग, (१४) देवमाया प्रपंच नाटक, (१५) वृत्त-विलास, (१६) पावस विलास. (१७) ब्रह्मदर्शन-पचीसी, (१८) तत्वदर्शन पचीसी, (१९) आत्म-दर्शन–पचीसी (२०) जगद्दर्शन पचीसी (२१) रसानन्द लहरी (२२) प्रेमदीपिका, (२३) सुमिल-विनोद (२४) राधिका विलास (२५) नीति-शतक, (२६) नख-शिख-प्रेम दर्शन !

निस्संदेह ये अत्यन्त प्रतिभा-सम्पन्न कवि थे, इन्होंने अपने ग्रन्थों में काव्य के सभी अंगों का निरूपण किया है । इतनी

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
मौलिकता की भी दाद दी जा सकती है। शृङ्गार-रस के तो ये चोटी के कवि माने जाते हैं। फिर भी इनकी भाषा में वह प्रवाह और प्रसादगुण नहीं जो बिहारी और मतिराम में है। इनकी कविता का नमूना नीचे दिया जाता है।

कोई कहो कुलटा कुलीन अकुलीन कहो,
कोई कहो रंकिनी कलंकिनी कुनारी हौं।
कैसो नर लोक परलोक बर लोकनि में,
लीन्हीं मैं अलोक लोक लोकनि ते न्यारी हौं॥
तन जाऊ, मन जाऊ, देव गुरुजन जाऊ,
प्रान किन जाऊ, टेक टरति न टारी हौं॥
वृन्दावन वारी बनवारी की मुकुटवारी,
पीतपटवारी वाहि मूरति पै वारी हौं॥

दास

भिखारीदास 'दास' का भी ये रीति-काल के कवियों में महत्व-पूर्ण स्थान है। ट्योंगा-गाँव निवासी कायस्थ थे। ये संस्कृत के भी प्रकांड पण्डित थे। इन्होंने ६ ग्रन्थ लिखे हैं जिनसे इनके आचार्यत्व का प्रमाण मिलता है। पिङ्गल, अलङ्कार, रस आदि सभी काव्यांगों का विशद निरूपण इन्होंने किया है। इनकी भाषा सरल और प्रसाद गुण युक्त है। उदाहरण—

अंखिया हमारी दई मारी सुधि बुधि हारीं
मोह तें जु न्यारी दास रहैं सब काल में।
कौन गहै ज्ञानै, काहि सौंपत सयाने, कौन

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

लोक ओक जानै ये नहीं हैं निज हाल में।
प्रेम पगि रहीं माया-मोह में उमगि रहीं;
ठीक ठगि रहीं, लगि रही वनमाल में।
लाज को अँचै के, कुल धरम पचै कै, वृथा
बन्धन सँचै के भईं मगन गोपाल में ॥

तोष

तोषनिधि सिंगरौर, जिला इलाहाबाद के रहने वाले थे। ये बड़े लोक-प्रिय कवि हुए हैं। इन्होंने 'सुधानिधि' नामक ग्रन्थ में नायिका-भेद का निरूपण किया है। इनके 'विनय-शतक' और 'नख-शिख' नामक दो ग्रन्थ और सुने जाते हैं। इनकी कवितायें बहुत सरस हुई हैं।

उदाहरण—

श्री हरि की छवि देखवे को अँखियाँ प्रति रोमन मैं करि देतो।
वैनन के सुनिबे कहँ श्रौन जितै तित सो करतो करि हेतो।
मो ढिग छोड़ि न काम कछू कहि तोष यहै लिखितो विधि एतो।
तौ करतार इती करनी करिकै कलि में कलकीरति लेतो।

पद्माकर

रीतिकाल के कवियों में 'पद्माकर' का स्थान बहुत ऊँचा है। इनकी भाषा परिमार्जित और प्रसादगुण-युक्त है, साथ ही लालित्यपूर्ण भी। राज-दरबारों में इन्होंने अपनी मनोहर कविता के द्वारा खूब आदर पाया। नागपुर, पन्ना, जयपुर तथा गवालियर आदि राज्यों से इन्हें पुरस्कार और जागीरें मिलीं। ये मुक्तक छन्द लिखने में अत्यन्त निपुण थे किंतु प्रबन्ध-काव्य में नहीं। इनकी कविता का उदाहरण नीचे दिया जाता है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

कूलन में केलि में कछारन में कुंजन में, क्यारिन में कलिन कलीन है। किलंकत कहै पदमाकर परागन में पौन हूं में, पानन में पीक में पलाशन पतंग है। द्वार में दिशान में दुनी में देश देशन में देखो दीप दीपन में दीपत दिगंत है ॥ बीथिन में ब्रज में नवेलिन में बेलिन में बनन में बागन में बगरो बसन्त है ॥

इन कवियों के अतिरिक्त और भी अनेक कवि इस काल में हुए हैं जिन्होंने रीति-ग्रन्थ लिखे हैं। इन ग्रन्थों में जो लक्षण दिए गए हैं वे यद्यपि आशय-व्यक्त करने में पूर्ण रूप से सफल नहीं हुए लेकिन उनके उदाहरण स्वरूप जो छन्द रचे गए उनसे हिन्दी-साहित्य का भण्डार जगमगा उठा। रीति-काल के कवि प्रायः दरबारी कवि थे और जनता के हृदय के सुख दुःख को न छूकर विलासियों के मन-रंजन का अधिक प्रयास करते रहे। इस काल में भूषण जैसे एक दो कवियों ने वीर रस की भी धारा प्रवाहित की।

काव्यांगों के लक्षण लिखने और उनके उदाहरण देने की परिपाटी को ही हरेक कवि ने पकड़ा, इसलिए काव्य में मौलिकता के लिए कोई स्थान नहीं रह गया। ज्यादातर एक ही प्रकार की उक्तियों को ज़रा अदल-बदल कर दोहराया जाने लगा। इसलिये धीरे-धीरे इस प्रकार की रचनाओं से सर्वसाधारण का मन ऊब गया और इस प्रकार की रचनाओं का लिखा जाना बन्द होने लगी।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

रीति-काल

अन्य कवि

रीति-काल में रीति-ग्रन्थों के अतिरिक्त दूसरी प्रकार की रचनाएँ भी लिखी जाती रहीं, शृंगार-रस के अतिरिक्त अन्य रसों की भी पुस्तकें लिखी गईं। कई कवि ऐसे भी हुए जिन्होंने लक्षण-ग्रन्थ न लिखकर, शृंगार रस की फुटकर रचनाएँ लिखी हैं। भक्ति, ज्ञान तथा नीति सम्बन्धी कविताएँ भी कही गईं, प्रबन्ध-काव्य भी लिखे गये। रीति-ग्रन्थ लिखने वाले कवियों की परिपाटी से अलग बहने वाले इन कवियों तथा काव्यों का परिचय पाए बिना उस काल के साहित्य का पूरा रूप सामने नहीं आ सकता।

इस काल में लिखे गए प्रबन्ध काव्यों में छत्र प्रकाश, सुजान चरित, महा भारत, भाषा भागवत, हम्मीर हठ, जरासन्ध बध, व्रज विलास आदि अच्छे काव्य हैं। बनवारी नाम के एक कवि ने महाराज जसवंत सिंह के भाई अमरसिंह का यश कविता में गाया है जो वीर-रस का अच्छा उदाहरण है। कृष्णगढ़ निवासी वृन्द कवि की सत्सई खूब लोक-प्रिय हुई थी। छत्रसिंह नाम के कवि ने 'महाभारत' की कथा 'विजय-मुक्तावली' के नाम से लिखी है। वैताल भट्ट की नीति सम्बन्धी कविताएँ भी खूब प्रचलित हुई हैं। नीचे उस काल के विशेष कवियों का परिचय दिया जाता है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आलम पहले ब्राह्मण थे, किन्तु इन्होंने शेख नामक रंगरेजन से विवाह कर मुसलमानों का धर्म स्वीकार किया। इनकी 'आलमकेलि' और फुटकर कविताएँ मिलती हैं। इनकी पत्नी शेख भी कविता करती थी। आलम की विशेषता उनकी ललित भाषा प्रेम भावना, तथा विरह की सुन्दर उक्तियों में दिखाई देती है।

आलम

उदाहरण—

जा थल कीन्हें विहार अनेकन ता थल कांकरी बैठि चुन्यों करैं।
जा रसना सों करी बहुबातन ता रसना सों चरित्र गुन्यों करैं॥
आलम जौन से कुञ्जन में करीं केलि तहां अब सीस धुन्यो करैं।
नैनन में जो सदा रहते तिन की अब कान कहानी सुन्यो करैं॥

सिखों के प्रायः सभी गुरुओं ने हिन्दी में पद लिखे हैं! गुरु गोविन्दसिंह के सुनीति-प्रकाश, सर्वलोह प्रकाश, प्रेम-सुमार्ग, बुद्धिसागर और 'चण्डी चरित्र' ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं! इनकी कविता ओजपूर्ण होती थी। उदाहरण—

गोविन्दसिंह

धन्य जियो तिहँ को जग में मुख तें हरि चित्त में युद्ध बिचारैं।
देह अनित्य न नित्य रहै जसु नाव चढ़े भवसागर तारैं॥
धीरज धाम बनाइ इहै तन बुद्धि सुदीपक ज्यों उजियारैं।
ज्ञानहिं की बढ़नी मनो हाथ लै कायरता कतवार बुहारैं॥

बुन्देल खण्ड के गोरेलाल पुरोहित का उपनाम लाल कवि

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

लाल

था। इन्होंने छत्र साल का जीवन-वृतांत ऐतिहासिक रूप में दोहा चौपाइयों में कहा था। यह एक सफल प्रबन्ध काव्य है तथा वीर रस की रचना का अच्छा नमूना है। वर्णन-शैली स्वाभाविक है। इनका एक और ग्रन्थ (विष्णु विलास) भी कहा जाता है।

छत्रिन की यह वृत्त बनाई।
सदा जंग की खांय कमाई॥
उद्यम ते सम्पत्ति घर आवै।
समुद उतिर उद्यम ते जैये॥
उद्यम तें परमेश्वर पैये।
जब यह सृष्टि प्रथम उपजाई।
जंग वृत्ति छत्रिन तब पाई॥

घनानन्द

घनान्द कायस्थ कुलोत्पन्न थे। ये मोहम्मद शाह बादशाह के मीर मुन्शी थे। जब नादिर शाह ने दिल्ली में कत्ले आम कराया था, तब इनका भी खातमा हो गया। इन्होंने प्रेम-रस की सुन्दर कविताएँ लिखी हैं। इनका 'सुजान-सागर' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुका है। इन्होंने और भी ग्रन्थ लिखे थे जिनके नाम—विरह लीला, कोकसार, रसकेलिवल्ली, कृपाकाण्डनिबन्ध, सुजानशतक, हैं। इन्होंने स्वयं प्रेम की अनुभूति की थी, इसलिये इनकी कविता हृदयस्पर्शी हुई है। उदाहरण—

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

जिनको नित नीके निहारति हीं,
तिनकों अँखियाँ अब रोवत हैं।
पल पांवड़े पइनि चाइनि सों,
अँसुवानि की मारनि धोवति हैं।
घन आनंद जान सजीवनि कों,
सपने बिन पायेइ खोवति हैं।
न खुली मुँदी जानि परैं, दुख ये,
कछु हाइ जगे पर सोवति हैं।

विश्वनाथ सिंह

रीवा-नरेश विश्वनाथ सिंह अच्छे कवि थे। इन्होंने लगभग ३२ पुस्तकें लिखी है। इन्होंने 'आनन्द-रघुनन्दन' नाटक लिखा है जो हिन्दी का प्रथम नाटक है। इसकी भाषा परिमार्जित सुगठित होती थी, वर्णन शैली भी मौलिक थी। उदाहरण—

जो बिन कामहिं चाकर राखत,
ऐन अनेक वृथा बनवावै।
आमद ते अधिकौ करे खर्च,
रिनै करे व्यौहरे ब्याज बढ़ावै।
बूझत लेखा नहिं कछुए,
नहिं नीति की रीति प्रजानिचलावै।
भाखत है बिसुनाथ ध्रुवै,
वहि भूपति के घर दारिद आवै॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

नागरीदास कृष्णगढ़ के नरेश थे। ये गृह-कलह के कारण विरक्त हो वृन्दावन चले गये और अपना उपनाम नागरीदास रख लिया। इनकी उप पत्नी बनी ठनी जी भी कवियित्री और भक्त थी। ये भक्त कवि हुए हैं और कृष्ण लीला-सम्बन्धी रचनाएँ लिखी हैं। इन्होंने करीब ७५ पुस्तकें लिखी हैं।

नागरी दास

जोधराज का "हम्मीर रासो" ग्रन्थ वीर गाथा है। इसमें अलाउद्दीन और वीर हम्मीर देव के युद्ध का वर्णन है। इसकी भाषा ओजस्विनी है।

जोधराज

उदाहरण—

कब हठ करै अलावदीं रण थंभवर गढ़ आहि।
कबै सेख सरनै रहै बहु रयो महिमा साहि॥
सूर सोच मन में करौ, पदवी लहौ न फेरि।
जो हठ छंडो रख तुम उत न लगै अजमेरि॥
सरन राखि सेजन तजो, तजौ सीस गढ़ देस।
रानी राव हम्मीर को यह दीन्हों उपदेस॥

पन्ना के हंसराज बख्शी—सखी सम्प्रदाय को मानने वाले थे। इनका सम्प्रदायिक नाम प्रेम-सखी था। इनके 'स्नेह सागर' ग्रन्थ में कृष्ण लीला का वर्णन है। भाषा तथा वर्णन शैली दोनों मधुर और मार्मिक हैं।

हंसराज बख्शी

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

चचा हित वृन्दावनदास गौड़ ब्राह्मण थे । ये राधा वल्लभीय थे । इन्होंने प्राय: एक लाख पद रचे हैं । इतना अधिक लिखने पर भी पद सरस और चमत्कार पूर्ण हुए हैं । उदाहरण —

चचाहित वृंदावन दास

हरषि झुलाइए मन भावन ।
उघरि परयो हित हेत गहगहो झूठ कियो चित-चावन ।
यह जो कल्पतरु यह रविजा-तट, यह बन वन झुक आवन ।
बृन्दाबन-हित रुप-बलि गई, यह हरियाली सावन ।

गुमान कवि महोवा के रहने वाले थे । इन्होंने नैषध जैसे उच्च कोटि के काव्य का हिन्दी पद्य में अनुवाद करके कमाल किया है । अनुवाद अच्छा हुआ है । इन के और भी दो काव्य-ग्रंथ कृष्णचन्द्रिका तथा छंदावली सुने जाते हैं ।

गुमान

सूदन माथुर चौबे थे । ये भरतपुर नरेश सूरजमल के साथ रहते थे । इन्होंने सूरजमल पर 'सुजान-चरित' नामक ग्रंथ लिखा, जिस में उनकी वीरता का जीता-जागता विवरण है । यह वीर रस का सफल काव्य है । उदाहरण—

सूदन

सेलनु धकेल तें पठान मुख मैला होत,
केते भट मेला हैं भजाए भुव भंग मैं ।
तंग के कसेते तुरकानी सब तंग कीनी,
दिल्ली—धौ दुहाई देत बंग मैं ।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सूदन सराहत सुजान किरवान गाई,
धायो धीर धारि वीरताई की उमंग मैं।
दक्खिनी पछेला करि खेला तैं अजब खेल,
हेला मारि गंग में रुहेला मारे जंग मैं॥

ब्रजवासीदास वैष्णव भक्त थे। इन्होंने दोहे चौपाइयों में कृष्ण की बाल-लीला का वर्णन किया है। इन की भाषा शुद्ध ब्रज है, सरल भी और परिमार्जित भी। इन्होंने प्रबोध चन्द्रोदय नाटक का व्रज-भाषा में अनुवाद भी किया है।

ब्रजवासी दास

गोकुलनाथ-गोपीनाथ-और मणिनाथ नाम के कवित्रय का नाम महाभारत का पद्यानुवाद करने के कारण प्रसिद्ध है। इन तीनों ने मिलकर यह अनुवाद का विराट कार्य किया। अनुवाद में काव्य के सभी गुण मिलते हैं। गोपीनाथ गोकुलनाथ के पुत्र थे और मणिराम उन के शिष्य। गोकुलनाथ के और भी अनेक ग्रन्थ पाए जाते हैं।

गोकुलनाथ गोपी नाथ मणिदेव

मधुसूदन ने रामाश्वमेध नामक प्रबंध काव्य लिखा है जो काफ़ी बड़ा है। यह दोहा चौपाइयों में है और भाषा अवधी है। इस में लव-कुश की वीरता का बहुत सुन्दर वर्णन है।

मधू सूदन

हमीर हठ नाम के वीर काव्य का हिंदी-साहित्य में आदरणीय स्थान है। इस के रचयिता पं० चन्द्रशेखर

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

चन्द्रशेखर वाजपेयी थे। इन्होंने और भी अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। हमीर हठ यद्यपि वीर काव्य है, लेकिन केवल परुषा-वृत्ति के कर्णकटु शब्दों की भरमार में ही इन्होंने वीर रस की पुष्टि नहीं मानी है। इन्होंने तो वीरता पूर्ण उक्तियों और भावनाओं को भर कर काव्य को बहुत सजीव बना दिया है।

उदाहरण—

भागे मीर जादे पीर जादे औ अमीर जादे,
भागे खानजादे प्राण मरत बचाय कै।
भागे गज बाजि रथ पथ न सँभारैं परैं,
गोलन पै गोल सूर सहमि सजाय कै।
भाग्यो सुलतान जान बचन न जानि बेगि,
बलित बितंड पै विराजि बिलखाय कै।
जैसे लगे जंगल में ग्रीषम की आगि
चलैं भागि मृग महिष बराह बिललाय के॥

गिरधरदास बाबू भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के पिता, गिरधरदास जी हिंदी के बहुत अच्छे कवि थे इनका जन्म सम्वत १८९० और मरण १९१७ में हुआ। इन्होंने जरासन्ध नामक महाकाव्य लिखा था। जो पूर्ण नहीं हो पाया। इन्होंने छोटी आयु में ही ४० ग्रंथ लिखे थे। इनकी कविता का सा प्रसादगुण अन्य कवियों में कम पाया जाता है।

उदाहरण--

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

जाग गया तब सोना क्या रे !

जो नर-तन देवन को दुर्लभ सो पाया अब रोना क्या रे !

ठाकुर से कर नेह अपाना इंद्रिय के सुख होना क्या रे !

जब वैराग्य ज्ञान उर आया तब चांदी औ सोना क्या रे !

दारा सुवन सदन में पड़ के भार सबों का ढोना क्या रे !

हीरा हाथ अमोलक पाया कांच भाव में खोना क्या रे !

दाता जो मुख मांगा देवे तब कौड़ी भर दोना क्या रे !

गिरधर दास उदर पूरे पर मीठा और सलौना क्या रे !

इसी प्रकार और भी अनेक कवियों ने विविध रंगों में साहित्य को रँगा है। इस काल के अन्तिम कवियों की रचनाओं से यह भली भाँति विदित होता है कि कविता रीति-ग्रन्थों की बेड़ियों से मुक्त होना चाहती थी। वह अपने लिए अधिक विस्तृत, और बहुमुखी क्षेत्र चाहती थी। उसकी यह अभिलाषा आगे के कवियों ने पूर्ण की।

———

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

क्रांति-काल

प्रवेश

विक्रम की सत्रहवीं सदी से १६वीं सदी के अंत तक हिंदी साहित्य रीति-ग्रन्थों और शृङ्गार-रस की कविताओं से सजता रहा है। मुग़ल बादशाह अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, औरंगजेब तथा उसके भी बाद के बादशाहों ने हिंदी भाषा को उन्नत करने उसके साहित्यिकों को आश्रय देने का शुभ कार्य किया। ओरछा, रीवा, जयपुर, जोधपुर, मेवाड़, कृष्णगढ़ जैसे राज्यों में भी कवियों को आश्रय मिला। राज्याश्रय पाकर हिंदी का साहित्य खूब फूला। किंतु १६वीं सदी के समाप्त होते होते भारतवर्ष की परिस्थिति सर्वथा बदल गई।

अङ्गरेजी राज्य की स्थापना के साथ ही देश की और देश के साथ ही साहित्य की स्थिति में बहुत अन्तर आ गया। मुगल साम्राज्य समाप्त हो गया, मराठों का हिंदू राज्य का स्वप्न भंग हो गया, राजपूत राजा मुरदा हो गए, अब साहित्य और कला की सुधि लेने वाला कोई नहीं रहा। विदेशी राज्य ने यहाँ की देसी भाषाओं को प्रोत्साहित करने की कोई आवश्यकता महसूस नहीं की। अंगरेजों ने बजाय हिंदी को अपनाने के उर्दू को अदालतों और दफ्तरों में स्थान दिया। यद्यपि यह उर्दू हिंदी ही की बेटी है, और प्रारम्भ में इसमें और खड़ी बोली में कोई अन्तर नहीं था, फिर भी लिपि भिन्नता के कारण यह हिन्दी से

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अलग हो गई, और बाद में साम्प्रदायिकता के कारण उर्दू में अरबी, फारसी के शब्द भर कर तथा उसके साहित्य में फ़ारस और अरब की संस्कृति और वातावरण भर कर उसे अभारतीय भाषा बनाने का पूरा उद्योग किया गया। भारत की अपनी भाषा हिंदी सर्वथा अनाथ हो गई। सर्वसाधारण के सिवा कोई और उसका धनी धोरी न रहा।

राज्याश्रयों में रह कर हिंदी-साहित्य विकसित तो हुआ, किंतु वह सर्वसाधारण के उपयोग का न बन सका था। अब वह राज्याश्रय से गिर कर जनता के हृदय में अपना स्थान बनाने लगा, इसलिये अब साहित्य में मनुष्य-जीवन के दैनिक आघात-प्रतिघात चित्रित होने लगे। हमारे नित्य के सुख-दुःख, हानि-लाभ, प्रेम-अप्रेम, गुलामी की वेदना, स्वतन्त्रता की अकांक्षा, सामाजिक कुरीतियों के प्रति विद्रोह भावना आदि अंकित होने लगे। साहित्य ने पूंजीपतियों के इशारे पर नाचने के बजाय अपने स्वतन्त्र अस्तित्व को विकसित किया। उसमें जनता के हृदय का असन्तोष, वेदना, परतन्त्रता जनित अपमान के प्रति विद्रोह जाग्रत हो उठा। संकुचित साधनों में रह कर भी वह जनता के सुख-दुख में शामिल होकर घर-घर में अपना स्थान बनाने लगा। काव्य-कला के ज्वाज्वल्यमान नक्षत्र अब उसमें चमकने बन्द हो गये। हृदय-रंजन के स्थान पर अब साहित्य का उद्देश्य लोक-उद्बोधन होगया। अब साहित्य के साकी ने विलास की मदिरा का प्याला एक ओर फेंक दिया और आत्म-बल,

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
जागरण, और क्राँति का त्रिशूल लेकर खड़ा हो गया। अब उसका क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया। है

इतने विस्तृत क्षेत्र का शासन केवल कविता-कामिनी से नहीं हो सकता था, इसलिए अब गद्य का आविर्भाव हुआ। इतिहास, विज्ञान, राजनीति आदि की पुस्तकें कविता में किस प्रकार सफलता से लिखी जातीं ? अब संसार बहुत बदल गया था। रेल, तार, जहाज़ आदि ने दूर-देशों को पास बना दिया। मनुष्यों को निकट कर दिया। साहित्य और संस्कृतियों का आदान-प्रदान होने लगा। छापेखानों ने भी साहित्य और संस्कृतियों के विस्तार को सरल कर दिया। ज्यों-ज्यों साहित्य जनता की वस्तु बनने लगा त्यों-त्यों उसे अपना सङ्कुचित रूप—केवल ललित कला बने रहने का मोह छोड़ना पड़ा। जो भाषा अपना अलग साहित्यिक रूप बनाकर विकसित हो उठी थी, उसे चोला बदलना पड़ा। वह कृत्रिमता की परिधि के बाहर निकल कर बोल-चाल की बोली, खड़ी बोली की सीमा में आई। साथ ही साहित्य-सृजन में पद्य के साथ गद्य को भी स्थान मिला और अब तो गद्य का इतना व्यापक और आदरणीय स्थान है कि आज पद्य की अपेक्षा गद्य में अधिक साहित्यक लिखा जा रहा है।

इस युग में भाव, भाषा, शैली और वातावरण सभी में परिवर्तन हुए। एक प्रकार की क्रांति हुई। इसलिए हम इसे क्रांति युग कहते हैं। यह क्रांति अभी समाप्त नहीं हुई है। अभी तक भाषा में

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

भी और साहित्य की धाराओं में भी परिवर्तन जारी है। हिंदी को सम्पूर्ण भारत की राष्ट्र-भाषा बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है और राष्ट्र भाषा बनने के साथ उसे अपना-चोला बदलना पड़ रहा है। उस में उर्दू तथा अन्य-प्रांतीय-भाषाओं से शब्द समूह लेने पड़ रहे हैं। इसे बहुत विस्तृत और व्यापक-रूप मिल रहा है।

इस युग के हिंदी-साहित्य के दो भाग तो स्पष्ट ही हैं।

(१) गद्य

(२) पद्य

गद्य में भी दो भाग हैं।

(१) प्रारंभिक-गद्य

(२) नवीन-गद्य

पद्य में भी दो भाग हैं

(१) बृजभाषा की धारा

(२) नवीन धारा

अगले अध्याओं में क्रांति काल के -साहित्य को इन्हीं भागों में बाँट कर परिचय देंगे।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

क्रांति काल

परिवर्तन-काल की कविता !

क्रांति काल का प्रारम्भ विक्रम १६०० से होता है। इस काल में भी कुछ कवि-गण प्राचीन परिपाटी के अनुसार कविता रचते रहे। इन कवियों में सेवक ने 'वाग्विलास' और 'नख-शिख' लिखा, महाराज रघुराजसिंह ने राम स्वयम्बर (प्रबंध-काव्य) रुक्मिणी-परिणाय, 'आनन्दांबु निधि' रा ष्टयाम, पुस्तकें लिखीं। सरदार ने 'साहित्य-सरसी' 'वाग्विलास' 'षटऋतु' 'हनुमत भूषण' 'तुलसी भूषण' 'शृङ्गार-संग्रह' 'राम रत्नाकर' 'साहित्य-सुधाकर' 'रामलीला प्रकाश' आदि पुस्तकें लिखीं, बाबा रघुनाथदास राम सनेही ने 'विश्राम सागर' लिखा, कुंदनलाल उर्फ ललित किशोरी ने भक्ति सम्बन्धी कविताएं लिखीं, राजा लक्ष्मणसिंह ने शकुन्तला का नाटक लिख कर सुन्दर गद्य और पद्य लिखने की प्रतिभा प्रदर्शित की। लछिराम भट्ट ने पुरानी परिपाटी पर अनेक रचनाएँ कीं, गोविंदगिल्ला भाई ने नीति विनोद, शृङ्गार-सरोजिनी, षट ऋतु, पावस-पयोनिधि, समस्या-पूर्ति-पयोनिधि, वक्रोक्ति-विनोद, श्लेष-चन्द्रिका, प्रारब्ध-पचासा, प्रचीन सागर आदि काव्य लिखे, वे विशेष उल्लेखनीय हैं।

इन कवियों में राजा लक्ष्मणसिंह का अपना अलग स्थान है। ये हिंदी-साहित्य में गद्य के प्रवर्तकों में से

राजा लक्ष्मणसिंह है। किंतु कवि के रूप में भी इनकी प्रतिभा आदरणीय थी। शकुन्तला का जो अनुवाद राजा

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

साहब ने किया है उनमें जो पद्य आये हैं बहुत सुन्दर हैं। उनकी शैली भी प्राचीन काल के कवियों की रचनाओं से अलग स्वतंत्र अस्तित्व रखती है। इन्होंने मेघदूत का भी मनोहर अनुवाद किया है।

हिंदी-साहित्य को प्राचीन जंजीरों से युक्त करने वालों में बाबू हरिश्चन्द्र का प्रमुख स्थान है। इन्होंने हिंदी-गद्य को परिष्कृत रूप दिया, उनके इस दिशा के उद्योगों की चर्चा हम गद्य-भाग में करेंगे, किन्तु कविता के क्षेत्र में भी इन्होंने काफी सुधार, संशोधन किये। इन्होंने 'कवि-वचन-सुधा' नाम का मासिक-पत्र निकाल कर चन्द्र देव, जायसी, कबीर आदि की रचनाएँ प्रकाशित कर उनका प्रचार बढ़ाया—बाद में इस पत्र ने पाक्षिक और फिर साप्ताहिक होकर राजनीतिक और सामाजिक विषयों पर भी लिखना शुरू किया। इस पत्र ने कई अच्छे हिंदी के लेखकों और कवियों को हिंदी-जगत् के सामने रखा, जिनमें राधाचरण गोस्वामी, लाला श्री निवासदास, पं० बिहारीलाल चौबे बाबू तोताराम वर्मा, पं० रामोदर शास्त्री आदि उल्लेखनीय हैं। इन्होंने सम्वत् १७७४ में 'बाल बोधिनी' नाम की पत्रिका भी निकाली थी। इन्होंने नाटक भी बहुत सुन्दर लिखे हैं, किन्तु यहाँ हमें केवल उनकी कविता से प्रयोजन है।

बाबू हरिश्चन्द्र पहले कवि हैं जो कविता को मनुष्य-जीवन के सम्पर्क में लाए हैं। इन्होंने देश भक्ति, समाज-सुधार, प्रकृति-वर्णन आदि नवीन विषयों पर कविताएँ लिखी। देश-भक्ति की

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

भावना भी इन्होंने भरी। यद्यपि इनकी रचनाओं की भाषा व्रज-भाषा थी लेकिन इन्होंने उसका परिष्कार किया। ऐसे शब्द जो बोलचाल की भाषा में नहीं आते थे उन्होंने निकाल फेंके, शब्दों को तोड़ना-मरोड़ना बन्द किया। एक तरह से यह कहना चाहिए कि बोल-चाल की भाषा और साहित्य की भाषा की भिन्नता दूर करने का प्रयत्न बाबू साहब ने किया था। कविता में इनके प्रेम-माधुरी, प्रेम-फुलवारी, प्रेम-मालिका और प्रेम प्रलाप ग्रंथ प्रसिद्ध हैं। इन्होंने कुल मिलाकर १७५ ग्रन्थ लिखे हैं। शेष ग्रंथों की चर्चा गद्य-भाग में होगी इनकी रचना के उदाहरण नीचे दिए जाते हैं।

कबहुं होत सतचन्द कबहूं प्रकटत दुरि भाजत।
पवन गवन बस बिम्ब रूप जल में बहु साजत॥
मन ससि भरि अनुराग जमुन जल लोटत डोलै।
कै तरङ्ग की डोर हिंडोरन करत कलोलै॥

उपर्युक्त छन्द में सुन्दर प्रकृति-वर्णन है।

रचि बहुविधि के वाक्य पुरानन माहिं घुसाए।
सैव साक्त वैष्णव अनेक मत प्रगट चलाए॥
विधवा व्याह निषेध कियो विभिचार प्रचारयो।
रोकि विलायत गमन कूप मण्डूक बनायो।
औरन को संसर्ग छुड़ाई प्रचार घटायो॥
बहु देवी देवता भूत प्रेतादि पुजाई॥
ईश्वर सों सब विमुख किये हिंदुन घबराई॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अपरस सोल्हा छूत रचि भोजन प्रीत छुड़ाय।
किये तीन तेरह सबै चौका चौका लाय॥

इसमें सुधारक हरिश्चन्द्र के दर्शन होते हैं। भारतेन्दु जी के अतिरिक्त उस समय के कवियों में पण्डित प्रताप-नारायण मिश्र, उपाध्याय बदरी नारायण प्रेमघन, ठाकुर जगमोहन जी, पण्डित अम्बिकादत्त व्यास और बाबू रामकृष्ण वर्मा, पण्डित नकछेदी तिवारी, विजयानन्द त्रिपाठी आदि के नाम उल्लेखनीय है। इन कवियों ने समस्या पूर्तियाँ अथवा स्वतन्त्र विषयों पर कविताएँ लिखी हैं। इसी धारा में लाला सीताराम बी० ए० की रचनाओं को स्थान मिलेगा, जिन्होंने रघुवंश और मेघदूत का अनुवाद किया है। अयोध्यासिंह उपाध्याय श्रीधर पाठक, देवीप्रसाद पूर्ण, बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकर लाला भगवानदीन, सनेही, आदि की रचनाएँ उन्हें परिवर्तन काल के कवियों में स्थान दिलाती हैं।

अयोध्यासिंह उपाध्याय का जन्म सम्वत् १९२२ में हुआ था।

अयोध्यासिंह उपाध्याय

इनका साहित्यिक जीवन व्रजभाषा की रचनाओं से ही प्रारंभ होता है, यद्यपि अब ये खड़ी बोली में भी सुन्दर कविता करते हैं। इनका 'रस कलस' व्रजभाषा का सुन्दर काव्य है। इसमें शृङ्गार के अतिरिक्त दूसरे रसों का भी खूब समावेश है। रसों का निरूपण करते समय भी देश, जाति, समाज, तथा नवीन समस्याओं और भावनाओं का वर्णन करना—उपाध्याय जी में नवीन युग की छाप

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

बतलाता है। इनका 'प्रिय प्रवास' काव्य महाकाव्यों की गिनती में आता है तथा उस पर हिंदी-साहित्य सम्मेलन ने मङ्गलाप्रसाद पुरस्कार भी दिया है। इनकी रचनाओं में, भाषा पर अधिकार, रस का परिपाक, सुन्दर उक्तियाँ और परिस्कृत विचार प्रणाली के दर्शन होते हैं। उदाहरण—

पकि पकि रहि हैं करेजो कौलों,
कलपि-कलपि कौलों बासर बिताइ हैं।
कौलों विधवापन-बधिक बेधि बेधि दे हैं,
कौलों बेबो बनि-बनि बिपुल बिलखाइ हैं।
'हरि औध' कौलों अनुकूल काल पैहैं नाहिं,
कौलों कालिमा में लगे पलक न लाइहैं।
कौलों ह्वै हैं बलि बलवान रुचि वेदिका पै,
भारत की बाला कौलों अबला कहाइ हैं।

श्रीधर पाठक

श्रीधर पाठक खड़ी बोली के भी कवि थे तथा ब्रजभाषा के भी। बीसवीं सदी के पुराने कवियों में पाठक जी की रचनाओं में सब से पहले क्रांतिकारी परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए हैं। इन्होंने विविध विषयों पर रचनाएँ की हैं हिमालय-वर्णन, काश्मीर-वर्णन, घन-विनय आदि रचनाएँ इनके प्रकृति - प्रेम की प्रदर्शक हैं। बाल-विधवा भारतोत्थान, भारत - प्रशंसा आदि कविताओं में देश और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी व प्रेम बतलाया है। इनकी रचनाओं से इनकी रागात्मिका वृत्ति

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

का परिचय मिलता। इनकी भाषा अलंकारों के कृत्रिम शृङ्गार से मुक्त हैं। इन्होंने 'डेजर्टेड विलेज' नाम के अंग्रेज़ी काव्य से हिन्दी किया और ऋतु संहार का संस्कृत से हिन्दी अनुवाद बहुत सफल किया है। इनकी रचनाओं के नमूने नीचे दिए जाते हैं।

जिमि कोउ पर्वत शृङ्ग तुङ्ग दीरघ तन ठाढ़ौ।
उठ्यो खड्डसों रहै बवंडर बीचहिं छांड़ो॥
यदपि तासु वक्षस्थल, दलबादल कोलाहल।
भाल विराजै सदा भानु आभा दुति उज्ज्वल॥

(ऊजड़ ग्राम)

अगनित पर्वत खण्ड चहूँ दिशि देत दिखाई।
सिर पर सत आकाश चरन पाताल छुआई॥
सोहत सुन्दर स्वेत पांति तर ऊपर छाई।
मानहुं विधि पट हरित स्वर्ग सोपान बिछाई॥

श्रीधर पाठक जी ने भारत की वन्दना और गौरव-गान के गीत लिखे हैं, उनका भी एक संग्रह प्रकाशित हुआ। ये सुन्दर राष्ट्र गीत हैं।

बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकर इस युग के सर्वश्रेष्ठ ब्रजभाषा के कवि थे। इन्होंने ब्रजभाषा में व्यंजना शक्ति का खूब विकास किया। अपनी भाषा में मुहावरों तथा लोकोक्तियों का सफल समावेश किया। भाव-व्यंजना में भी ये खूब सफल हुए हैं। इनकी रचनाएँ ब्रज भाषा के श्रेष्ठ तम कवियों के टक्कर की हैं। इनकी

जगन्नाथ दास रत्नाकर

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

'शृङ्गार-लहरी' उद्धव-शतक, गंगावतरण, हरिश्चन्द्र, आदि काव्य की पुस्तकें लिखी हैं। आपने बिहारी रत्नाकर नामक बिहारी-सतसई की विद्वत्तापूर्ण टीका की है। उदाहरण—

आए हौ सिखावन कौं जोग मथुरातैं तो पै
ऊधौ ये वियोग के वचन बतावौ ना।
कहै रतनाकर दया करि दरस दीन्यौ
दुख दरिबै कौं तौपै अधिक बढ़ावौना।
टूक टूक ह्वै है मन, मुकुर हमारौ हाय
चूकि हूं कठोर बैन, पाहन चलावौ ना।
एक मनमोहन तौ बसि के उजार्यो मोहि
हिय मैं अनेक मन मन मोहन बसावौ ना।

कानपुर के राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' प्रतिभा सम्पन्न कवि थे।

देवीप्रसाद 'पूर्ण'

इनकी रचना सरस, कोमल शब्दों से युक्त होती थी। इन्होंने 'धाराधर-धावन' नाम से मेघदूत का अनुवाद किया है। आपने शृङ्गार-भक्ति, वेदांत, ऋतु वर्णन आदि पुराने विषयों पर भी रचनाएँ की हैं तथा देश-भक्ति सम्बन्धी नवीन प्रकार की भी। इनकी रचनाओं में इनकी भावुकता का परिचय मिलता है। इन्होंने 'चन्द्रकलाभानुकुमार' नाम का एक नाटक भी लिखा है। इनकी कविता का उदाहरण नीचे दिया जाता है।

सजि लीजिए हार सरोजन के चहै भीजिए जो हिम को जल है।
चहै न्हाइए अमृत के सर में चहै खाइए जौन सुधा फल है॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

निगमागम 'पूरन' टेरि कहै वृथा चन्दन चाँदनी को बल है।
हरि के पद पंकज धारे बिना नर हीतल होत न सीतल है ॥

सत्यनारायण

पण्डित सत्यनारायण ब्रजभाषा के अच्छे कवि थे। इनका जन्म सम्वत १९४१ में हुआ था। इन्होंने थोड़ी-बहुत खड़ी बोली में भी रचना की है, किन्तु इनकी ब्रजभाषा की रचनाएँ बहुत सरस और ललित हुई हैं। इनका पढ़ने का ढङ्ग बहुत मधुर था। इनकी पुस्तकों में देश-भक्त होरेशस, उत्तर राम चरित नाटक, तथा मालती-माधव विशेष महत्व के हैं। उदाहरण—

अब न सतावौ !
करुणा घन इन नयनन सों द्वै बुँदिया तो टपकावौ।
सारे जग सों अधिक कियो का ऐसो हमने पाप।
नित नव दई निर्दई बनि जो देत हमैं सन्ताप।
साँची तुमहि सुनाइत जो हम चौंकत सकल समाज।
अपनी जाँघ उघारे उघरति बस अपनी ही लाज।
होरी सी जातीय प्रेम की फूंकि न धूरि उड़ावौ।
जुग कर जोरि सत मांगत अलग न आर लगावौ॥

वियोगी हरि

वियोगी हरि जी का नाम हरिप्रसाद द्विवेदी है। इनका जन्म सम्वत् १९५३ में हुआ था। इन्हें बचपन से ही काव्य रचना का शौक़ रहा है। इन्हों ने अनेक पुस्तकों का लेखन और सम्पादन कार्य किया है। किन्तु, इनकी 'वीर-सतसई' पुस्तक अधिक महत्वपूर्ण है। इस

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने १२००रु० का पुरस्कार दिया है। ये व्रजभाषा के कवि हैं, किन्तु भावनाएँ नवीन हैं। उदाहरण—

एक छत्र बनकौ अधिप पंचानन ही एक।
गज शोणित सों आप ही कियौ राज अभिषेक॥
दंति कुम्भ शोणित सनी लसति सिंह की डाढ़।
मनु मंगल ससि-श्रृङ्गकों भेंटत भरि भुज गाढ़॥

इस परिवर्तन के समय में प्राचीन और नवीन भावनाएं, व्रज और खड़ी बोली कुछ काल तक समानांतर रूप से चलती रही। अब तो प्राचीन भावनाएं कहीं कहीं कवि सम्मेलनों और समस्या पूर्तियों में दर्शन देती हैं, अन्यथा चारों ओर नये युग की तूती बोल रही है। साहित्य का दृष्टिकोण ही बदल गया है।

———

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

क्रांति-काल

नवीनधारा

नवीन धारा में उस साहित्य का परिचय कराया जावेगा, जिस की भाषा, भावना और शैली प्राचीन साहित्य से सर्वथा भिन्न हो गई।

खड़ी बोली

नवीन धारा में खड़ी बोली ने कविता के क्षेत्र से ब्रजभाषा को एक प्रकार से निर्वासित ही कर दिया। कुछ लोग खड़ी बोली को ब्रजभाषा के बाद को उत्पन्न हुई भाषा बतलाते हैं. किंतु, वास्तविक बात यह नहीं है। जिस समय ब्रजभाषा का नाम भी नहीं सुनाई देता था उस समय भी खुसरो आदि ने खड़ी बोली में रचनाएँ की हैं। कबीर आदि संत कवियों ने इसे अपनाया है। बाद में ब्रजभाषा के साथ साथ इस में कविताएँ होती रही हैं। मुसलमान आदि विदेशी लोगों को साहित्यक-भाषा की अपेक्षा बोल-चाल की भाषा सीख लेना आसान था इस लिए उन की रचनाएँ खड़ी बोली में हुईं। संतों ने जनता के लिए जो साहित्य लिखा वह भी बोल चाल की ही भाषा में। किंतु, यह भी निर्विवाद है कि राज दरबारों में पलने वाले साहित्य की अपनी भाषा अलग बन गई थी और खड़ी बोली को साहित्यिक भाषा बनने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। किंतु, अब साहित्य ने पैर पसारे हैं। वह राजमहलों से लेकर झोंपड़े तक दैनिक-जीवन को व्यक्त कर रहा है, इसलिए

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

अब उसे सर्व साधारण की भाषा को ही साहित्य की भाषा बनाना पड़ी है।

गद्य के विकास ने तो खड़ी बोली को भारत भर की व्यापक भाषा का रूप दिया है। यह असंभव था कि गद्य की भाषा और होती और पद्य की और। इसलिए वृजभाषा को कविता के क्षेत्र से अलग होना पड़ा।

महावीर-प्रसाद द्विवेदी

जिस प्रकार बाबू हरिश्चन्द्र को व्रजभाषा के परिमार्जन, तथा गद्य को विकसित करने का श्रेय प्राप्त है, उसी तरह पंडित महावीर-प्रसाद-द्विवेदी को खड़ी बोली की कविता का प्रचार करने तथा गद्य को भी बहुमुखी प्रगति देने का। द्विवेदी जी अधिकार पूर्ण गद्य लेखक तो थे ही साथ ही, खड़ी बोली में पद्य रचना भी इन्हों ने की है। 'सरस्वती' का संपादन करके इन्होंने अनेक सुकवियों को प्रोत्साहित किया, अनेक गद्य-लेखकों को पथ प्रदर्शन किया। हिंदी-साहित्य का जो वर्तमान रूप दिखाई दे रहा है उस के बनाने में द्विवेदी जी का बहुत हाथ है।

गत अध्याय में हम श्री अयोध्यासिंह उपाध्याय और पं० श्रीधर पाठक की चर्चा कर चुके हैं इन्होंने भी खड़ी बोली में बहुत सुन्दर कविताएँ लिखी हैं, तथा काव्य का विषय भी खूब विस्तृत किया है। इनके अतिरिक्त नाथूराम-शंकर शर्मा, सैयद अमीरअली मीर, माधव शुक्ल, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', रूपनारायण पाण्डेय, लोचनप्रसाद पाण्डेय, मुकुटधर आदि सुकवियों

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

। काफ़ी रचनाएँ की हैं। इस प्रगति के युग में अब उनकी रचनाएँ अधिक मनोहर नहीं जान पड़तीं किंतु खड़ीं बोली को अपरिष्कृत रूप से काव्य की भाषा बनाने का ऐतिहासिक महत्वपूर्ण कार्य इन्होंने किया है।

खड़ी-बोली के कवियों में मैथिली शरण गुप्त का स्थान सब से महत्वपूर्ण है। ये हिंदी के जातीय कवि हैं। आप मैथिलीशरण गुप्त के काव्य भारत की आकाँक्षाओं और विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। आपके प्रथम काव्य 'भारत-भारती' में देश के गौरवमय भूत और दैन्यपूर्ण वर्तमान पर अच्छा प्रकाश डाला है। आप का 'जयद्रथ-वध' खंड काव्य खूब ज़ोर-दार हुआ है। आप के 'यशोधरा' काव्य में करुण-रस का खूब परिपाक हुआ। आपका 'साकेत' प्रबंध काव्य है। इनके अतिरिक्त गुप्त जी ने अनेक रचनाएँ की हैं। गुप्त जी की भावनाओं में मौलिकता, वर्णन-शैली में ओज और प्रवाह तथा भाषा में प्रसाद गुण है। पुराने भावों को छोड़ कर गुप्त जी ने कविता को नवीन नवीन भावनाओं और प्रकरणों की सेर कराई है। रीति-काल के बंधनों से मुक्ति पाकर हिंदी-कविता अवश्य ही गुप्त जी को धन्यवाद देती है। उदाहरण

दूंगा सब मैं न्यारे न्यारे
कुछ भी पास न रक्खूंगा मैं, तभी त्याग रस चक्खूंगा मैं।
घर-घर को, बाहर-बाहर को, आज आज को, कल-कल को।
जल थल जल-थल को, नभ नभ को, अनिल अनिलानल नलको
और तुम्हें क्या दूंगा प्यारे?

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

पं० रामनरेश त्रिपाठी ने खड़ी-बोली की कविता के क्षेत्र में बहुत काम किया है । इन की 'कविता-कौमुदी'

रामनरेश त्रिपाठी

नाम के अन्य कवियों की रचनाओं के संग्रहों ने हिंदी जगत् में कविता के प्रति प्रेम उत्पन्न किया है ।इतनी अच्छी तरह सुरुचि के साथ कविताओं को किसी ने उपस्थित नहीं किया था । संपादन कार्य के अतिरिक्त इन्होंने स्वयं भी खड़ी-बोली की सुन्दर रचनाएँ की हैं । इन के मिलन, पथिक और स्वप्न नामके खंड काव्य बहुत लोकप्रिय हुए हैं । ये देश-भक्ति के भावों से भरे हुए खंड काव्य हैं ।

पं० माखनलाल चतुर्वेदी का हिंदी-कविता-जगत में अलग स्थान है । इनकी रचनाएँ वेदनाभरी, रहस्यभरी

पं. माखनलाल चतुर्वेदी

और राष्ट्रीयता के तेज से दीप्तमान हैं । वर्णन शैली में चमत्कार है । 'अनुभूति' के ये धनी हैं । इन की कविताएँ बहुत पसन्द की जाती हैं पर अभी तक इनकी रचनाओं का कोई संग्रह नहीं निकला । 'कर्मवीर' के संपादक के नाते तथा 'कृष्णार्जुन युद्ध' नाटक के लेखक के नाते भी आप का हिंदी-जगत् में अच्छा स्थान है ।

किन-बिगड़ी घड़ियों में झाँका ? तुझे झांकना पाप हुआ ।
आग लगे वरदान निगोड़ा; मुझ पर आकर शाप हुआ ।
जांच हुई, नभ से भूमण्डल तकका व्यापक नाप हुआ ।
अगणित बार समा कर भी छोटा हूं यह सन्ताप हुआ ।
अरे अशेष ! शेष की गोदी तेरा बने बिछौना-सा,
आ मेरे आराध्य, खिला लूं मैं भी तझे खिलौना-सा ।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

बाबू जयशङ्कर 'प्रसाद' का नाम उन कवियों में हैं जिन्होंने हिंदी कविता की काया ही पलट दी। आप उस धारा

जयशंकर प्रसाद

को जन्म दाता थे जिसे छायावाद के नाम से बोलते हैं और जिस वाद को तूती आज हिन्दी कविता जगत् में बोल रही है। सीमा के घूंघट में असीम को देखना, मूर्ति में अमूर्त को देखना ही छायावाद है। छायावादी कवियों में प्रसाद जी का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। भावनाओं की गम्भीरता, कल्पना की उच्चता, भाषा का माधुर्य्य, शैली का अनोखापन इनकी विशेषताएँ हैं। इन्होंने फुटकर रचनाएँ भी की हैं, तथा कामायिनी नाम का महाकाव्य भी लिखा है। इस महाकाव्य पर हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने मंगला प्रसाद पुरस्कार दिया है। इस के अतिरिक्त आप सफल नाटककार भी हैं। उदाहरण :—

तू आता है फिर जाता है।

जीवन में पुलकित प्रणय-सदृश, यौवन की पहली कांति अकूत
जैसी हो, वह तू पाता है, हे बसन्त तू क्यों आता है?
पिक-अपनी कूक सुनाता है। तू आता है फिर जाता है।
बस, खुले, हृदय से करुण कथा, बीती बाते कुछ मर्म व्यथा,
वह डाल-नाल पर जाता है, फिर ताल-ताल पर गाता है।

छायावादी कवियों में पण्डित सुमित्रा नन्दन पंत बहुत प्रिय हैं। इन्होंने फुटकर रचनाओं में प्रकृति के

सुमित्रानन्दन पन्त

गम्भीर तत्वों को भर दिया है। इनकी भाषा मधुर और परिस्कृत होती है। इनके वीणा,

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

पल्लव, गुंजन और युगांत नाम के संग्रह खूब लोक-प्रिय हुए। अभीं तक ये काव्योपवन की कोकिला बने हुए थे और प्रकृति की छवि का गान गाते थे। अब प्रकृति की छवि-मदिरा में अपने जीवन के सुख-दुख मिलाकर, एक नया ही आसव बनाकर पाठकों को पिलाते हैं। अब इनकी रचनाओं ने पलटा खाया है और जीवन के कठोर सत्यों की ओर इनका ध्यान गया है। उदाहण

माँ मेरे अरि को बल दो,
उसको यही कठिन फल दो!
जिस से सतत सतर्क रहूँ मैं,
निज अवलम्ब अचंचल दो।
सदा स्वेदमद् रख यह भाल।
मुझे मृणाल-तन्तु से बांध,
करना सफल न अरिकी साध,
कठिन निगड से बँधवाकर माँ।
धीरज-देना-अटल, अगाध,
निडर काल-से कर विकराल।

सूर्यकान्त निराला

पण्डित सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' वास्तव में निराले कवि हैं। आपने केवल भाषा और भावों में ही क्रांति नहीं की बल्कि छन्दों को भी बन्धन-मुक्त कर दिया। आप की कविताएँ दार्शनिक तत्वों से भरी होती हैं। आप गद्य के भी अच्छे लेखक हैं। गीत भी बहुत लिखे हैं। आप की स्फुट कविताओं का संग्रह 'परिमल'

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

नाम से प्रकाशित हुआ है, तथा गीतों का संग्रह 'गीतिका' के नाम से। उदाहरण—

देख चुका जो-जो आये थे चले गये;
मेरे प्रिय सब बुरे गये, सब भले गये।
चिंताएँ, बाधाएँ आती हीं हैं, आयें;
अंध हृदय है बंधन निर्दय लाएँ।
मैं ही क्या, सबही तो ऐसे छले गये,
मेरे प्रिय सब बुरे गये, सब भले गये।

बालकृष्ण शर्मा नवीन

पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' नवीन काल के अलमस्त कवि हैं। आपकी रचनाओं में प्रवाह खूब होता है। आप की राष्ट्रीय कविताएँ आग फूक देने वाली हैं, लेकिन आप की प्रेम-रस से छलकती रचनाएँ भी अप्रतिम हैं। आप बहुत अच्छे वक्ता और गद्य-लेखक भी हैं। उदाहरण

कूजे दो कूजे में बुझने वाली मेरी प्यास नहीं;
बार-बार ला ला कहने का समय नहीं अभ्यास नहीं।
अरे बहा दे अविरल-धारा,
बूंद-बूंद का कौन सहारा,
मन भर जाय, जिया उतराये।
डूबे जग सारा का सारा।
ऐसी गहरी, ऐसी लहराती ढलवा दे गुल्लाला।
साकी, अब कैसा विलम्ब ढरका दे अंगूरी हाला।।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
महादेवी वर्मा का हिन्दी-काव्य में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। आप की स्फुट रचनाएँ लिखी हैं। गीत लिखने

महादेवी वर्मा

में आपको कमाल हासिल है। अनुभूति की गहराई आप की रचनाओं की विशेषता है। आत्म-समर्पण की भावना आप की कविताओं में खूब व्यक्त हुई हैं। आप की भावनाएँ और भाषा दोनों मधुर और ललित हैं। आप के नीहार, रश्मि, नीरजा और सांध्यगीत नाम के संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उदाहरण—

राग-भीनी तू सजनि, निः श्वास भी तेरे रंगीले।
लोचनों में क्या मदिर नव
देख जिसको नीड़ की सुधि
फूल निकली बन मधुर रव॥
झूमते चितवन गुलाबी
में चले घर खग हठीले
छोड़ किस पातालका पुर
राग से बेसुध, चपल सपने सजीले नयन में भर।
रात नभ से फूल लाई आंसुओं से कर सजीले॥

श्री भगवती चरण वर्मा नवीन युग के भावना-प्रधान कवि हैं। इनकी भाषा में गज़ब का प्रवाह और

भगवतीचरण वर्मा

प्रसादगुण है। अनुभूति खूब गहरी है। आप के मधुकण और प्रेम-सङ्गीत नाम के संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उदाहरण—

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

कुछ सुन ले, कुछ अपनी कह लें।
जीवन सरिता की लहर-लहर,
मिटने को बनती यहां प्रिये,
संयोग क्षणिक, फिर क्या जाने,
हम कहां और तुम कहां प्रिये,
पल भर तो साथ-साथ बहलें,
कुछ सुन लें कुछ अपनी कह लें।

इनकी कविताओं में रस, सङ्गीत, ताल और गति के साथ सुन्दर भावों का सामञ्जस्य है।

बच्चन

श्रीयुत हरवंश राय बच्चन ने हालावाद की कविताएँ लिखकर अपना नाम लोक प्रिय बना लिया है। इन्होंने 'शराब' पर रचनाएँ लिखकर जीवन के अनेक दार्शनिक तत्वों का निरूपण किया है। दूसरे प्रकार की रचनाएँ भी लिखी हैं। इनके मधुशाला, तेराहार, मधुकलश, आदि कई संग्रह निकल चुके हैं। इनकी रचनाओं में सरसता और प्रसाद गुण खूब है। पढ़ने में तो आपको कमाल हासिल है। उदाहरण—

तीर पर कैसे रुकूं मैं आज लहरों में निमन्त्रण।
रात का अन्तिम प्रहर है झिलमिलाते हैं सितारे॥
वक्ष पर युग बाहु बांधे मैं खड़ा सागर किनारे।
वेग से बहता प्रभंजन केश पट मेरे उड़ाता॥
शून्य में भरता उदधि उरकी रहस्यमयी पुकारें।
इन पुकारों की प्रतिध्वनि हो रही मेरे हृदय में॥

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

है प्रतिच्छायित यहां पर सिंधु का हिल्लोल कंपन।
तीर पर कैसे रुकूं मैं आज लहरों में निमन्त्रण॥

मुरार (ग्वालियर) के जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिंद' छायावादी एवं राष्ट्रीय कविताओं के लिखने वाले कवियों में अपना अलग स्थान रखते हैं। इनकी भावनाएं गम्भीर और ललित होती हैं और कल्पनाएँ चमत्कार पूर्ण। भाषा परिमार्जित और प्रवाह पूर्ण। भाव और भाषा का इतना परिष्कृत, ओजस्वी और प्रवाहमय मेल शायद ही किसी दूसरे कवि में मिले। इनकी राष्ट्रीय कविताएँ भी अप्रतिम हैं।

जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद

तेरी करुणारुण असीम छवि देख हृदय-अम्बर में,
पाती जीवन के द्वन्द्वों की गति, विराम पल भर में।
तेरे चिन्तन के प्रभात में बन जाता जीवन निष्काम,
तेरे अनुभव की संध्या में प्राणों को मिलता विश्राम।
दुख की निशा और सुख का दिन, दोनों से थक कर संसार,
तेरे चरणों में लेता है, रुक कर उर का भार उतार।
सघन स्वप्न तेरे अंचल का जग का सांझ-सवेरा,
तेरी स्मृति के उषा-लोक में पाते पाँथ बसेरा॥

ये सरल भावुक कवि हैं। इनकी अपनी शैली है जो सब प्रकार की कृत्रिमताओं से मुक्त है। इनकी रचनाओं में वेदना अपने यौवन पर है। इनके जादूगरनी और 'अनन्त के पथ पर' काव्य छायावाद के अच्छे उदाहरण हैं। किसी वर्तमान कवि ने छायावाद को

हरिकृष्ण प्रेमी

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

ऐसे शुद्ध रूप में उपस्थित नहीं किया—जैसे 'अनन्त के पथ पर' पुस्तक में व्यक्त हुआ है। आपकी 'आँखों में' पुस्तक भावुक नवयुवकों को बहुत प्रिय है। आप की वर्तमान रचनाओं में साम्यवाद की ओर विशेष झुकाव हुआ है और इनकी नवीन रचनाएँ बहुत ही ज़ोरदार हुई हैं। प्रसाद गुण प्रेमी जी की अपनी चीज़ है। वर्तमानकाल के किसी कवि को इतनी सरल भाषा में गम्भीरतम विषय को कहने में इतनी सफलता नहीं मिली। कवि के साथ आप अच्छे नाटक कार हैं।

मेरे जीवन का ध्रुवतारा तू स्थिर है मैं चलता हूँ।
तू है पारावार प्यार का मैं तुझ में ही ढलता हूँ।
तू है उर की ज्योति सदा मैं तेरी लौ में जलता हूँ।
स्वयं छला जाता हूं प्यारे जब मैं तुझको छलता हूँ।

तेरे मादक नयनों का जब
मूक इशारा पाता हूं।
मैं आता हूँ, मैं आता हूं,
कह तुझ में मिल जाता हूँ।

पं० उदयशंकर भट्ट

पण्डित उदयशंकर भट्ट बहुत पुराने समय से कविता लिखते हैं। आपकी फुटकर रचनाएँ अधिकांश में दार्शनिकता लिए होती हैं। भाषा संस्कृत मय होती है। आपने 'मत्स-गन्धा' तथा 'विश्व-मित्र' नाम के भाव नाट्य भी लिखे हैं, कवि के साथ आप नाटककार भी हैं

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आगए घन मोतियों का हार ले।

नील नभ के हृदय में सब प्यास सावन की लिए वे,
जलन भी अपनी-बुझाने अश्रु से तर दिल किए वे,
किसी क्रंदन के स्वरों से मूर्च्छनाएँ राग की भर,
आग-सी भर कर हृदय में स्वकर मुक्तादल लिए वे,
आह भर भर गिर रहे हैं किसी प्रिय का प्यार ले।
आगए घन आंसुओं का हार ले।

इनके अतिरिक्त इस युग में अनेक सुकवि हैं, जिनकी रचनाओं की साहित्य-जगत् में धूम है। इस युग की कविता की यह विशेता है कि वह राजदबारों की सीमा छोड़ कर जगत् के सुख-दुःख भरे जीवन-क्षेत्र में आई है, काया के हाव-भाय का अवलोकन छोड़ कर हृदय और आत्मा की 'अनुभूति' ग्रहण कर रही है। दैनिक जीवन के सुख-दुःख को व्यक्त कर रही है। आज वह चिरंतन सत्य का प्रकाश भर रही है। क्रांति का शंख बजा रही है। इस युग में लिखी हिन्दी की अनेक रचनाएँ विश्व-साहित्य के आँगन में रखी जाने पर झेंपेंगी नहीं।

आधुनिक युग की कविताओं की प्रवृत्ति बहुमुखी हैं। विशेष प्रवृत्तियों के अनुसार हम इन्हें चार भागों में बाँट सकते हैं। (१) राष्ट्रीय-रचनाएँ (२) छायावादी रचनाएँ (३) भावना-प्रधान रचनाएँ (४) साम्यवादोन्मुखी रचनाएँ। आधुनिक काल के राष्ट्रीय कवियों में श्रीधर पाठक, माधव शुक्ल, मैथिली शरण गुप्त, गया-प्रसाद शुक्ल 'सनेही' माखनलाल चतुर्वेदी 'एक भारतीय आत्मा'

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

रामनरेश त्रिपाठी, बालकृष्ण शर्मा, जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिंद', रामधारी सिंह 'दिनकर' हरिकृष्ण 'प्रेमी' सुभद्रा कुमारी चौहान, सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' के नाम विशेष प्रिय हैं। राष्ट्रीय काव्यों में मैथिली शरण गुप्त का 'भारत-भारती' श्रीधर पाठक का भारत-गीत, रामनरेश त्रिपाठी के मिलन, पथिक, स्वप्न, और हरिकृष्ण 'प्रेमी' का स्वर्ण विहान (पद्य नाटिका) नामक काव्यों के नाम लिये जा सकते हैं। स्व० जयशङ्करप्रसाद सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पन्त, जगन्नाथ प्रसाद, 'मिलिंद', महादेवी वर्मा, रामकुमार वर्मा, हरिकृष्ण प्रेमी, बच्चन, उदयशङ्कर भट्ट, दिनकर, नेपाली, आरसी प्रसाद सिंह, जनार्दन प्रसाद 'द्विज', लक्ष्मीनारायण मिश्र, रामनाथ 'सुमन' रमाशङ्कर 'हृदय', आदि छायावादी रचनाएँ लिखने वाले प्रमुख कवि हैं। इन कवियों में से जिन-जिन के संग्रह निकले हैं उनमें छायावाद की रचनाएँ पर्याप्त मात्रा में हैं। ये छायावादी रचनाएँ माधुर्य, लालित्य और नवीनता के कारण हृदय पर तुरन्त असर करती हैं।

भावना-प्रधान प्रवृत्ति की रचनाएँ वे हैं जो न राष्ट्रीय रचनाओं की सीमा में आती हैं न छायावादी रचनाओं की। जिनका सम्बन्ध न अध्यात्मिक जगत् से है न राजनीति से। वे जीवन के सुख-दु:ख, प्यार-द्वेष को लेकर बढ़ती हैं सियारामशरण गुप्त, गुरुभक्त सिंह आदि की रचनाएँ विशेषतः ऐसी हैं। और छायावादी कवियों की भी अनेक रचनाएँ इस प्रकार की हैं।

अब पद्य साहित्य में भी साम्यवाद की भावनाएँ नज़र आने

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

लगी है। इन रचनाओं में पूँजीवाद के प्रति असन्तोष और विद्रोह की भावनाएँ भरी हुई हैं। जगन्नाथप्रसाद मिलिंद, हरिकृष्ण 'प्रेमी', नवीन, अज्ञेय, दिनकर, नेपाली, उदयशंकर भट्ट की बड़ी ज़ोरदार साम्यवादी रचनाएँ देखने में आई हैं। इस तरह हिंदी पद्य-साहित्य जीवन की विविध भावनाओं को व्यक्त कर रहा है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

गद्य-साहित्य

प्रारंभिक-काल

किसी भाषा के भी इतिहास को उठा कर देखिये, उसका श्रीगणेश पद्य में ही हुआ होगा। भावावेशमूलक होने के कारण यह स्वभाविक भी है। भाषा के विकास और परिमार्जन के पश्चात् ही उसमें गहन-गम्भीर विषयों को व्यक्त करने की क्षमता आती है. तभी गद्य का जन्म भी होता है। यही कारण है कि पद्य का आविर्भाव गद्य से सदैव पहले ही हुआ करता है। हिंदी में गद्य रचना के आरम्भ मुहूर्त का पता लगाना एकान्त असम्भव-सा प्रतीत होता है फिर भी 'शिष्टप्रमाण' पुस्तक के आधार पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि दसवीं शताब्दी के आस-पास इसे महात्मा गोरखनाथ ने लिखा होगा। तेरहवीं शताब्दी में राजपूतों के शिलालेख भी हिंदी गद्य-लेखन की सूचना देते हैं। विक्रम की सोलहवीं शताब्दी में गो० विट्ठलनाथ ने व्रजभाषा गद्य की पहिली पुस्तक लिखी थी जिसका नाम है. शृंगार-रसमण्डन।

व्रजभाषा गद्य

भारतव्यापी वैष्णव आन्दोलन के विकास के साथ लोगों की रुचि गद्य-लेखन की ओर आकर्षित हुई। गोकुलनाथ ने चौरासी वैष्णवों की वार्ता, दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता और वन-यात्रा नामक तीन

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

गद्य ग्रंथ लिखे। इसके अतिरिक्त 'सिद्धान्त रहस्य' ग्रन्थ की टीका भी आपने सिद्धान्त-रहस्य-वार्ता भी लिखी। अष्टछाप के कवि नन्ददास ने नासिकेत पुराण और विज्ञानार्थ प्रकाशिका टीका नामक दो ग्रन्थों की रचना की। इन्हीं के समकालीन हरि-राम ने महाप्रभून की द्वादस निज वार्ता आदि अनेक पुस्तकें लिखीं। इसके बाद ब्रजभाषा में मौलिक ग्रंथ नहीं मिलते, मिलती हैं केवल टीकाएँ। चैतन्य चरित्र सार नामक एक वृजभाषा का ग्रन्थ अवश्य मिलता है जिसका काल सम्वत् १६४७ के लगभग है। वैष्णव भक्तों द्वारा लिखे गये इन ग्रंथों की भाषा बोल-चाल की वृजभाषा थी। इसमें फारसी आदि विदेशी भाषाओं के प्रच-लित शब्दों का व्यवहार भी खुले रूप में किया गया है। केवल उपदेश और धर्म प्रचारार्थ वर्णन होने के कारण इनकी भाषा में कोई साहित्यिक चमत्कार नहीं।

गद्य का क्रमिक विकास समझने के लिए अधोलिखित प्राचीन गद्य के अवतरण पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे —

मेवाड़ की सनद

स्वस्त श्री श्री चित्रकोट महाराजाधीराज तपेराज श्री श्री रावल जी श्री समर सी जी वचनातु दा अमा आचारज ठाकुर रुसीकेष कस्य थाने दली सू डायजे लाया अणी राज में ओषद थारी लेवेगा। (सं० १२२६ वि०)

पृथ्वीराज कालीन गद्य

श्री दली सूं भाई लंगरी राय जी आया है जो श्री दली सूं

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

श्रीहुजूर को बी खास रुका आयो है जो मारो भी पदारवा सीखवो है। (सं० १२३५ विक्रमी)

महात्मा गोरखनाथ की गद्यशैली

पराधीन उपरान्ति बन्धन नाहीं, सु आधीन उपरान्ति मुकुति नाहीं (सं० १४०७)

गोस्वामी विट्ठलदास

जो गोपीजन के चरन विषै सेवक की दास करि जो इनके प्रेमामृत में डूब के इनके मन्द हास्य ने जीते हैं अमृत समूह ताकरि निकुंज विषै शृङ्गार रस श्रेष्ठ रसना कीनो सो पूर्ण होत भई। (सं० १६०० वि०)

खड़ीबोली गद्य

खड़ी बोली का व्यवहार यहाँ पर उर्दू के जन्मकाल से भी पहले किया जाता था किन्तु ब्रजभाषा के प्रबल प्रवाह और प्रान्तीय भाषाओं ने इसे उठने नहीं दिया। कभी भूले भटके उसका व्यवहार साहित्य में भी हो जाया करता था । सं० १६२७ में अकबर के समय सुकवि 'गंग' ने 'चन्द छन्द वरनन की महिमा' नामक पुस्तक की गद्य खड़ी बोली में रचना की थी । इस भाँति खड़ी बोली को साहित्यिक जामा पहनाने का श्रेय गंग कवि को है। आप की गद्य का नमूना भी देखिए—

"और आम खास भरने लगा है जिसमें तमाम उमराव आय आय कुर्निश बजाय जुहार करके अपनी अपनी बैठक पर बैठ जाया करे अपनी मिसल से।" (सं० १६-६)।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

इस के पश्चात सं० १६८० में मेवाड़ निवासी जटमल द्वारा रचित 'गोरा बादल की कथा' की राजस्थानी मिश्रित खड़ी बोली का भी नमूना देखिए—

"ये कथा सोलः से असी के साल में फागुन सुदी पूनम के रोज बनाई । ये कथा में दो रस हे—वीर रस व सिंगार रस हे ।"

सं० १७६७ में सूरत मिश्र आचार्य केशव दास के रीति ग्रन्थ 'कवि प्रिया' की टीका करते हुए लिखते हैं—'सीस फूल सुहाग अरु बेंदा भागए दोऊ आए पावड़े सोहे सोने के कुसुम तिन पर पैर धीर आए हैं। इस के पश्चात सं० १७८६ में लिखे गए दास जी के गद्य की शैली का भी निरीक्षण कीजिए—

"और युवावस्था पाये ते नारी चतुर ह्वै जाति है। उपदेश शब्द लक्षणा सो मालूम होता है और वाच्यहू में प्रगट है।

इन अवतरणों द्वारा यह भली भाँति स्पष्ट हो जाता है कि खड़ी-बोली अकबर और जहांगीर के काल में ही सभ्य समाज द्वारा अपना ली गई थी । उसी समय से यह मंद गति से आगे बढ़ती रही। खड़ी बोली ने जिस समय लिखित साहित्य में पदार्पण किया उस समय गद्य साहित्य का विकास नहीं हुआ था। इसी लिए शिष्ट समुदाय ने इसे निस्सङ्कोच ग्रहण कर लिया।

अठारहवीं शताब्दी, इस देश के लिए संघर्ष, अशान्ति और अव्यवस्था का युग था । मुगल साम्राज्य के ध्वंसावशेष पर न मालूम कितनी छीना-झपटी शुरू हुई। परन्तु पांसा पड़ा अंग्रेज़ों के ही हाथ में। अस्तु इन्होंने अपना प्रभुत्व स्थापित किया। यहां

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

व्यापारी से बादशाह बनकर इन्होंने जन साधारण के अधिक सम्पर्क में आने की आवश्यकता का अनुभव किया। अब व्यापार काल के दुभाषियों द्वारा ता काम चलना असभव था। उस आवश्यकता पूर्ति के लिए पाठ्यग्रन्थों की जरूरत पड़ी लार्ड वेल्ज़ली ने यह कार्य भार १७६१ में स्थापित फ़ोर्ट विलियम कालेज के प्रिंसिपल डा० गिलक्राइस्ट को सौंपा। प्रिंसिपल महोदय ने हिन्दी और उर्दू दोनों ही भाषाओं में गद्य पुस्तकें लिखाने की व्यवस्था की। अतः इस काल में मुन्शी सदासुखलाल, सदल मिश्र, लल्लूलाल, और सैयद इशांउल्लाहखाँ, इन चार महानुभावों ने खड़ी बोली के गद्य की नियमित व्यवस्था की।

लल्लूलाल

लल्लूलाल आगरा निवासी औदीच्य ब्राह्मण थे। सं० १८२० के लगभग पैदा हुए थे। जीविका की खोज में मुर्शिदाबाद पहुंचे और वहां सात वर्ष तक नवाब के आश्रयमें रहे। सं० १८५७ से १८८१ तक फोर्ट विलियम कालेज में अध्यापक रहे। यहीं इन्होंने सिंहासन बत्तीसी, बैताल पच्चीसी, शकुन्तला नाटक, माधोनल, और प्रेम सागर, लाल चद्रिका टीका, सभा विलास संग्रह आदि पुस्तकों की रचना! की एक छापाखाना खोलकर प्रकाशन कार्य भी शूरू किया। आप के गद्य का नमूना—

'निदान श्री कृष्णचन्द्र बैठा सुन सुन घबड़ा कर अर्जुन बोला कि हे देवता किसके आगे तू यह बात कहै है और क्यों इतना खेद करै है।"

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

लल्लूलाल जी की भाषा ब्रज रंजित् खड़ी बोली है। वाक्य बड़े हैं, मुहावरों का भी प्रयोग कम है, विदेशी भाषाओं के प्रचलित शब्दों का भी वहिष्कार सा ही किया गया है। सारांश में वह न तो नित्य व्यवहार की भाषा है और न ही गम्भीर भाव प्रकट करने के ही योग्य है।

ये विहार के रहने वाले ब्राह्मण थे। इनका जन्म संवत १८३० के लगभग और मृत्यु सं० १६०५ में हुई थी।

सदल मिश्र — इन्हों ने भी कालेज के अधिकारियों की प्रेरणा पर 'नासिकेतोपाख्यान' पुस्तक की उसी समय रचना की थी जब कि लल्लूलाल ने प्रेम-सागर की। आप के गद्य का एक अवतरण यहाँ पर उद्धृत किया जाता है।

'कुंड में क्या अच्छा निर्मल पानी कि जिस में कमल के फूलों पर भौंरे गूंज रहे थे तिस पर हंस सारस चक्रवाकादि भी तीर-तीर सुहावन शब्द बोलते, आस पास की गाछों पर कुहू कुहू कोकिलें कुहुक रही थी।

इन्हों ने व्यवहारोपयोगी भाषा लिखने का प्रयत्न किया है किन्तु उस में अवधी के कुछ रूप मिलते हैं। लल्लूलाल जी से इन की भाषा अधिक परिमार्जित है।'

सदासुख लाल — आप का जन्म स्थान दिल्ली था जन्म सं० १८०३ के लगभग और मृत्यु १६०१ में हुई थी। ये कम्पनी में ६५ वर्ष तक एक अच्छे पद पर प्रतिष्ठित रहे। इसके पश्चात प्रयाग चले आए और यही अपना जीवन

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

हरि भजन और साहित्य सेवा में बिताया। आप ने स्वान्तःसुखाय श्रीमद्भागवत का अनुवाद सुखसागर के नाम से किया है। उस का एक नमूना नीचे उद्धृत किया जाता है।

"जो बात सत्य होय उसे कहा चाहिये, कोई बुरा माने कि भला माने।"

आप की भाषा उस काल के सभ्य-जनों के बोल चाल की भाषा थी। तत्सम शब्दों के प्रयोग द्वारा भाषा के भावी साहित्यिक रूप का पूर्व आभास दिया है।

इंशाअल्ला खाँ — ये उर्दू के कवि थे जो दिल्ली के उजड़ने पर लखनऊ के नवाब सादतअली खां के आश्रय में आकर रहे थे। इन के जीवन का अन्तिम काल बहुत कष्ट से बीता और सं० १८१५ में इन की मृत्यु हो गई थी। इन्होंने 'रानी केतकी की कहानी' नामक पुस्तक लिखी है।

उसकी बानगी भी देखिए—

"अपने मिलने वालों में से एक कोई बड़े पढ़े-लिखे, पुराने धुराने डाँग, बूढ़े घाघ यह खटराग लाए।" आपने ठेठ हिन्दी में ही लिखने का प्रयत्न किया है, जिसे उर्दू वाले भाषा कहते हैं।

कतिपय लेखकों का विचार है कि अंग्रेज़ों की ही प्रेरणा से हिन्दी खड़ी बोली के गद्य का अविर्भाव हुआ। किन्तु यह बात नितान्त भ्रममूलक है। फोर्ट विलियम कालेज द्वारा पाठ्य पुस्तकें लिखाए जाने की व्यवस्था से पूर्व ही सुखसागर और रानी केतकी की कहानी के रूप में खड़ी बोली की दो पुस्तकें लिखी जा चुकी

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

थीं। इन चारों सज्जनों में मुन्शी सदासुखलाल ने नित्य को व्यवहारोपयोगी भाषा लिखने के लिए सर्व प्रथम लेखनी उठाई थी अस्तु वही आधुनिक गद्य के प्रतिष्ठापक होने के अधिकारी भी हैं।

शिक्षा प्रचार

अब तक भारत में अंग्रेज़ी राज्य की किसी नियत शिक्षा प्रणाली का निश्चय नहीं हुआ था। संस्कृत तथा अरबी के कुछ कालेज अवश्य खुल गए थे किन्तु १८३३ ई० में चार्टर बदला, उसके साथ ही एक ला कमीशन नियुक्त हुआ जिसके प्रधान थे लार्ड मेकाले। इन्होंने भारत में शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी रख दिया। इसके पश्चात् भारत सचिव लार्ड हैलीफैक्स की शिक्षा की वृहद् योजना द्वारा भारतीय भाषाओं के स्कूल, कालेज और विश्वविद्यालयों की स्थापना पर ज़ोर दिया गया था।

पादरी-प्रचारक

इससे पहले यद्यपि 'उदंत मार्तण्ड' तथा 'बङ्गदूत' नाम के दो पत्र हिन्दी में निकले किन्तु वे क्षणिक छटा दिखलाकर ही अस्त भी हो गए। इसी समय तक हिन्दी गद्य का जो विकाश हुआ था उससे यदि किसी ने अनुचित लाभ उठाया तो वे थे विलियम केरे तथा अन्य पादरी। इन लोगों ने सदा सुख और लल्लू लाल की भाषा को अपना आदर्श बना कर ईसाई धर्म की पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद करना शुरू कर दिया। १८१८ ई० तक हिन्दी में इन्होंने बायबिल तथा अन्य कई ग्रन्थ, कोष और पुस्तकें आदि प्रकाशित कर चुके थे। शिक्षा की नई आयोजना के अनुसार रतनलाल,

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
ओंकार भट्ट, बद्रीलाल शर्मा आदि सज्जनों ने पाठ्य पुस्तकें भी लिखीं।

विक्रम की बीसवीं शताब्दी में राजा शिवप्रसाद का आविर्भाव

राजा शिवप्रसाद — हुआ। आप के प्रयत्न से सं० १६०२ में काशी से 'बनारस अख़बार' का हिन्दी में प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। इसकी भाषा उर्दू और लिपि देवनागरी थी। इसकी भाषा का नमूना नीचे दिया जाता है।

"लोग उस पाठशाला के क़िले के मकानों की खूबियाँ अक्सर बयान करते और उनके बनने के ख़र्च की तज़वीज करते हैं कि जमा से ज़ियादा लगा होगा और हर तरफ़ से लायक़ तारीफ़ के हैं।"

भाषा के उर्दू होने के कारण संस्कृत के विद्वान् इसे नहीं पढ़ते थे किन्तु नव शिक्षित उर्दू जानने वालों को हिन्दी पढ़ने की प्रेरणा इस अखबार से खूब मिली। इससे उर्दू के अतिरिक्त दया, धर्म आदि हिन्दी शब्दों का भी यत्र-तत्र व्यवहार किया जाता था।

सं० १६१३ में राजा साहब शिक्षा विभाग में स्कूलों के इस्पेक्टर नियुक्त हुए। शिक्षा विभाग में मुसल्मानों को हिन्दी का विरोध करता हुआ देखकर आपने उसका पक्ष लिया। आपने इतिहास तिमिर नाशक, राजाभोज का सपना, जीविका परिपाटी, भारतवर्षीय इतिहास जगत वृतांत आदि पुस्तकें लिखीं। इसके साथही आपने पं० श्रीलाल, बंशीधर आदि अपने मित्रों द्वारा

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
हिन्दी की काफ़ी पाठ्य पुस्तकें तैयार करवाईं।

राजा साहब की पुस्तकों की भाषा चलती सरल हिन्दी थी। इसी समय 'सुधाकर' नामक एक हिन्दी पत्र काशी से प्रकाशित होने लगा।

राजा लक्ष्मणसिंह

राजा शिवप्रसाद के समकालीन राजा लक्ष्मणसिंह ने आगरे से एक प्रजाहितैषी पत्र निकाला और सम्वत् १९१८ में शकुन्तला का अनुवाद किया और इसके पश्चात् रघुवंश का भी। राजा साहब की भाषा परिमार्जित सरस, रोचक और साहित्यिक थी। असली हिन्दी का शुद्ध रूप सामने रखने वालों में राजा लक्ष्मणसिंह ही सर्व प्रथम आगे आए थे।

नवीन चन्द्रराय

संयुक्त प्रान्त में जिस भाँति राजा शिवप्रसाद हिन्दी की रक्षा और प्रचार का महान् उद्योग कर रहे थे। पंजाब में उसी प्रकार नवीनचन्द्रराय। आपने बङ्गाली की सहायता से स्कूलों में प्रचारार्थ शुद्ध हिन्दी की बहुत सी पुस्तकें तैयार कीं। पञ्जाब में स्त्री-शिक्षा प्रचार में भी आप का बहुत बड़ा हाथ था। समाज-सुधार में भी आपने काफ़ी प्रयत्न किया। आपने एक ज्ञान-प्रदायिनी पत्रिका भी प्रकाशित की। यहाँ पर पं० गौरदत्त का भी नाम उल्लेखनीय है। जिन्होंने हिन्दी कोर्स के लिए कई पुस्तकें लिखी हैं।

स्वामी दयानन्द

ईसाईयां के मत प्रचार और पैगम्बरी ऐकश्वरवाद ने सर्व साधारण के ध्यान को अपनी ओर खींचा। 'स्वर्ग के सर्टीफिकेट' लेने के लिए मूर्ख लोगों में एक प्रकार की लालसा बढ़ी। उसी समय

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

स्वामी दयानन्द का आविर्भाव हुआ। सम्वत् १६२० से आपने घूम-घूम कर शास्त्रार्थ करना और व्याख्यान देना आरम्भ किया। १६३८ में आर्यसमाज की स्थाना की। आपने सत्यार्थ प्रकाश और वेदों के भाष्य भी संस्कृत और हिन्दी दोनों ही में लिखे हैं। आपने केवल सामाजिक सुधार ही नहीं किया प्रत्युत आपके कारण युक्त प्रांत के पश्चिमी जिलों तथा पञ्जाब में हिन्दी गद्य का प्रचार बड़ी तीव्र गति से हुआ है।

सम्बत् १६२० पंजाब में श्रद्धाराम फुल्लौरी ने भी अपने व्याख्यानों, कथाओं और पुस्तकों द्वारा पंजाब के

श्रद्धाराम फुल्लौरी सामाजिक क्षेत्र में बढ़ने वाले ईसाई धर्म को रोकने में काफ़ी प्रयत्न किया था। कपूरथला नरेश के महाराजा रणधीरसिंह को ईसाई धर्म में दीक्षित होने से आपने ही अपनी अद्भुत प्रतिभा और विद्वत्ता द्वारा रोका था। सत्यामृत प्रवाह, आत्म चिकित्सा, तत्व दीपक, धर्म रक्षा, शतोपदेश आदि अनेक पुस्तकें आपने लिखी थीं। सं० १६३८ में आपकी मृत्यु हो गई थी।

भक्तप्रवर विद्वानोंने हिन्दी गद्य को अपने उपदेशों से अलंकृतकर, समाज-सुधारकों ने उसे अपना माध्यम बनाकर हिन्दी पुजारियों ने पत्र और पुस्तकों के लेखन प्रकाशन द्वारा, ईसाई प्रचारकों ने उसे अपने धर्म-प्रचार का साधन बनाकर, उसके प्रारम्भिक विकास में काफी सहायता पहुंचाई। जिसने भी जो अन्दोलन उठाया उसे हिन्दी गद्य का आश्रय अवश्य लेना पड़ा।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

इन कारणों से हिंदी गद्य के इस शैशवकाल में उसका बहुत कुछ विकास भी हुआ। किन्तु इतना कुछ होने पर भी गद्य की कोई रूप-रेखा निश्चित न हो सकी।

एक ओर उसकी बहनें मराठी, बङ्गला, गुजराती आदि प्रांतीय भाषाएँ संस्कृत पदावली का आश्रय लेकर अपने मार्ग पर अग्रसर हो रही थी दूसरी ओर हिंदी की पुत्री उर्दू अरबी फ़ारसी के संसर्ग में आकर अपनी माता को ही पछाड़ कर अपने में आत्मसात् करने पर तुली हुई थी। राजा लक्ष्मणसिंह ने अपने समय में यद्यपि हिन्दी गद्य की भाषा के भावी रूप का आभास लोगों को दे दिया था, फिर भी आवश्यकता थी, किसी ऐसे प्रतिभासम्पन्न विद्वान की, जो उसका चित्र बनाकर लोगों के हृदयों में उसकी तस्वीर खींचता। ठीक इसी परिस्थिति में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का उदय हुआ, जिन्होंने संशय समुद्र में डूबने उतराने वाली हिन्दी को सुरम्य तट पर ला कर प्रतिष्ठित कर दिया।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म भाद्र शुक्ल ५ सं० १९०७ को हुआ था। इनके सम्पन्न पिता गोपालचन्द्र जी इन्हें ९ वर्ष का ही छोड़ कर सुरलोक सिधार चुके थे। माता पहले ही गोलोक वासिनी बन चुकी थीं। इसीलिए बालक भारतेन्दु उच्च शिक्षा से वंचित रह गए। किन्तु अपनी अप्रतिम प्रतिभा के सहारे आप ने चतुर्मुखी ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आप संस्कृत, हिंदी, बंगाल और अंग्रेजी के ज्ञाता थे।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आप का उदय उस समय हुआ जब देश सङ्घर्ष की कण्टका-कीर्ण गलियों से गुज़र चुका था। पश्चिम के संसर्ग, नई शिक्षा नई सभ्यता, नई रोशनी के प्रभाव से लोगों की विचार धारा बदल चुकी थी। उनके मन में देश हित, समाज सुधार की नई उमंगें लहरें ले रही थीं। वे काल की गति के साथ द्रुत वेग से बढ़ने के लिए उत्सुक हो रहे थे। काल की गति ने विचारों को बहुत आगे बढ़ा दिया था किंतु साहित्य गतानुगति के उसी गड्डा-लिका-प्रवाह में बह रहा था। जीवन और साहित्य में अन्तर आने के कारण एक दूसरे के लिए परस्पर कोई आकर्षण नहीं रह गया था। भक्ति और शृङ्गार की घिसी कविताओं और शुष्क उपदेशों से भरा गद्य अरुचिकर प्रतीत होने लगा था।

भारतेन्दु ने इस विषमता का अनुभव किया, समय की आवश्यकता को पहचाना। सं० १९२५ में आप ने बंगला के आधार पर एक विद्यासुन्दर नाटक लिखा और कवि वचन सुधा नामक पत्र निकाला, बाद में यह 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' और 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' के रूप में परिवर्तित हो गया। चन्द्रिका ने हिंदी को एक नये रूप में भाषा-भाषियों के सामने पेश किया जिसमें सौंदर्य शीतलता और नूतनता की अमिट छटा थी। हिन्दी का यह नूतन रूप ही साहित्य का स्थायी वैभव था। इसके बाद आप ने स्त्री शिक्षा के लिए 'बाला बोधिनी' निकाली। आपकी सर्वतोमुखी प्रतिभा ने जिस ओर मुँह मोड़ा उसी ओर अपने अभूतपूर्व जौहर दिखलाए। नाट्य-रचना, कवित्व, सम्पादन सभी दिशाओं में आपने अद्भुत कौशल दिखलाया।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आप का पहला मौलिक नाटक वैदिक हिंसा हिंसा न भवति है। इसके उपरान्त आपने कर्पूर मंजरी, सत्य हरिश्चन्द्र, चन्द्रावली, भारत दुर्दशा, अंधेर नगरी, नील देवी इत्यादि नाटक लिखे हैं। इन नाटकों में ज्ञान है, अभिनय है, सत्यता की छाया है, भावों की नूतनता है और है मजी हुई भाषा का चमत्कार। कश्मीर कुसुम, बादशाह दर्पण आदि लिख कर आप ने इतिहास लेखन की ओर भी लोगों को प्रवृत्त किया है।

प्राचीनता और नवीनता का सुन्दर सामञ्जस्य ही भारतेन्दु की कला की विशेषता है कभी वे रीति काल के कविता कुंज में जा बैठते थे तो कभी आधुनिक काल की वीथियों में विचरण करने लग जाते। कभी भण्ड साधुओं का भण्डाफोड़ करते तो कभी सच्चे भक्त की भांति हृदय को आर्द्र बना देते, कभी समाज सुधारक के रूप में कठिन कठोर आलोचनाएँ करते तो कभी देश-प्रेम के लिए आँखों से दरिया बहा देते, यही कारण था कि नये पुराने, शृङ्गारी, भक्त सभी आप के प्रशंसक और साथी थे।

दाता ऐसे थे कि द्वार से कभी किसी को मोड़ा ही नहीं। सखा ऐसे थे कि एक दो नहीं अनेकों को हिन्दी की ओर प्रवृत्त कर लेखक और कवि बना दिया। यही कारण है कि हिन्दी साहित्य में आप का समय हरिश्चन्द्र काल के नाम से प्रसिद्ध है। जीवन और साहित्य के अन्तर को मिटाकर दोनों को मिला देने, साहित्य में नए-नए विषयों का समावेश करने, शब्दों को समुचित और

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सुन्दर रूप में व्यवहार करने, भाषा को परिष्कृत और परिमार्जित बनाने में भारतेन्दु ने बहुत बड़ा काम किया है।

आप के रचे साहित्य का अनुशीलन करने पर आप की दो शैलियों का पता चलता है। एक को भावावेश की शैली और दूसरी को तथ्य निरूपण की शैली कह सकते हैं। पहली में वाक्य छोटे, भाषा बोल चाल की किन्तु चुस्त और कहीं कहीं अन्य भाषाओं के एकाध प्रचलित शब्दों का व्यवहार भी मिलता है। दूसरी में संस्कृत पदावली का कुछ अधिक व्यवहार था किन्तु बान्ध चातुरी में भावों के उलझने का कहीं भी स्थान नहीं। आप की शैली के सम्बन्ध में इतना ही कहना अलम् होगा कि भाषा चपल चुटीली सरल और भावों की वशवर्तिनी थी। आपने केवल पैंतीस वर्ष की अवस्था में ६ जनवरी सन् १८८५ ई० को इहिलोक लीला संवरण की थी।

बद्रीनारायण 'प्रेमघन'

भारतेन्दु के मित्रों में से थे। 'आनन्द कादंबिनी' और 'नागरी नीरद' पत्र निकाले तथा भारत सौभाग्य, प्रयाग रामागमन नाटक लिखे। आपमें गद्य और पद्य दोनों को ही लिखने की प्रतिभा थी। समालोचना का सूत्रपात हिन्दी साहित्य में प्रायः आप के ही द्वारा हुआ है। आप गद्य लेखन को भी कला मानते थे। आप की भाषा सानुप्रास, वाक्य लम्बे, शैली क्लिष्ट और गम्भीर थी किन्तु शिथिलता के स्थान पर चुलबुलाहट ही उस में अधिक पाई जाती थी। आप अच्छे कवि भी थे। जन्म सं० १९१२ और मृत्यु काल १९८० है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आप का जन्म सं. १६१३ और मृत्यु सं० १६५१ में हुई थी।

पं० प्रतापनारायण मिश्र — आप कवि और लेखक दोनों ही थे। १८४० में आपने ब्राह्मण पत्र निकाला और १८४६ में 'हिन्दुस्तान' के सहकारी संपादक नियुक्त हुए। आपने २० पुस्तकें लिखी हैं । व्यंग्य के आप सुन्दर लेखक थे। गम्भीर प्रबन्ध संयत भाषा में लिखते थे और साधारण निबन्ध पूरबी-रंजित चोजभरी भाषा में लोकोक्ति और कहावतों का भी प्रयोग आप खूब किया करते थे।

श्रीनिवासदास — दिल्ली निवासी मारवाड़ी वैश्य थे। जन्म सं० १६०७ में हुआ था और मृत्यु १६४४ में कुल छत्तीस वर्ष की अवस्था में हुई थी। तप्तासंवरण, संयोगिता स्वयम्वर, रणधीर प्रेम मोहनी और परीक्षा गुरु आपकी लिखी पुस्तकें हैं। आपकी भाषा साफ़-सुथरी और सोद्देश्य होती थी। आप भारतेन्दु के समसामयिक थे।

जगमोहनसिंह — आप सं० १६१४ ई० में विजयराघगढ़ में पैदा हुए और सं० १६५६ में चल बसे। संस्कृत और अंग्रेज़ी के आप अच्छे ज्ञाता थे। विद्याध्ययन के लिए आप बनारस आए थे वहीं आप से भारतेन्दु की मित्रता होगई। आप सुलेखक भी थे और सुकवि भी। आपने ऋतु संहार, कुमार सम्भव आदि संस्कृत ग्रन्थों का पद्यानुवाद किया है। तथा सांख्य सूत्रों की टीकाएँ लिखी हैं। प्रकृति निरीक्षण और वर्णन में आप की अनुभूति और पारखीपन झलकता है। ग्राम्य जीवन

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

का उत्कृष्ट और मर्मिक चित्रण करने वाले आप हिन्दी के पहिले कवि थे।

आपका जन्म सं० १७०१ और मृत्यु सं० १७७१ है। आपने अंग्रेज़ी और संस्कृत की शिक्षा पाई थी। सं० १६३३ में आपने 'हिन्दी प्रदीप' नाम का एक पत्र निकाला था जो बहुत दिनों तक चलता रहा। आपकी भाषा में व्यंग और मुहाविरों का अच्छा व्यवहार हुआ है। आपने कई छोटी छोटी पुस्तकें भी लिखी हैं। शब्द सागर कोष के सम्पादन में भी आपने कुछ सहायता दी है।

बालकृष्ण भट्ट

आप अलीगढ़ निवासी भारतेन्दु के साथियों और 'कविवचन-सुधा' के लेखकों में थे। आपने 'भारत बन्धु' नाम का एक पत्र भी निकाला था, आप यावज्जीवन हिन्दी सेवा में ही लगे रहे। आपने कुछ अनुवाद किया है और कुछ मौलिक रूप में भी लिखा हैं।

तोताराम बी० ए०

भारतेन्दु के साथ हिन्दी-हित-साधन में हाथ बटाने वाले महानुभावों में से ये विशेष उल्लेखनीय हैं—

केशवराम भट्ट—इन्होंने बिहार से 'बिहार-बन्धु' निकाला और कई पुस्तकें भी लिखी हैं।

(२) राधाचरण गोस्वामी—भारतेन्दु नामक पत्र निकाला और विदेशयात्रा विचार, विधवा-विवाह विवरण, पुस्तकें लिखीं और बङ्गला में अनुवाद भी किए हैं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

(३) अम्बिकादत्त व्यास ये संस्कृत के प्रतिभाशाली विद्वान् थे। बिहारी-विहार, गद्य काव्य मीमांसा आदि कई पुस्तकें लिखी हैं।

(४) मोहन लाल पंड्या—ये इतिहास के अच्छे ज्ञाता थे। रासो संरक्षा नाम की ऐतिहासिक पुस्तक इन्होंने लिखी है।

(५) भीमसेन शर्मा—'आर्यसिद्धांत' पत्र के संस्थापक और सम्पादक थे। इन्होंने कई पुस्तकें लिखी हैं।

इनके अतिरिक्त गदाधर सिंह, कार्तिक प्रसाद खत्री, काशीनाथ खत्री, दुर्गाप्रसाद मिश्र, छोटूलाल मिश्र आदि हैं।

भारतेन्दु काल हिन्दी इतिहास का स्वर्ण काल है। भारतेन्दु और उनकी मित्रमण्डली ने हिन्दी प्रचार का एक आन्दोलन खड़ा कर दिया था। स्वयं भारतेन्दु इधर उधर नगरों में जाकर हिंदी उन्नति पर व्याख्यान देते, हिंदी की उत्तम पुस्तकों को बिना मूल्य बांटते। प्रताप नारायण मिश्र 'हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान' का गीत गाते फिरते थे। गौरीदत्त अभिवादन के लिये 'जय नागरी' का ही व्यवहार करते। दफ्तरों में जाकर नागरी का प्रचार करते, मेमोरियल भेजते। कहने का तात्पर्य यह है कि इस काल में हिन्दी भाषा और साहित्य दोनों की काफ़ी उन्नति हुई।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

गद्य साहित्य

नवीन काल

भारतेन्दु काल में हिन्दी साहित्य निर्माण का कार्य अच्छी प्रकार प्ररम्भ हो गया था। हिन्दी साहित्य और भाषा की स्वतन्त्र सत्ता का भाव भी प्रतिष्ठित हो गया। लोगों की रुचि भी उधर हो चुकी थी। उत्तर भारत में इसका प्रचार भी काफ़ी हुआ था। किंतु अंग्रेज़ी भाषा के उच्च उपाधिधारियों की दृष्टि में अभी तक हिन्दी के अनुराग की लाली नहीं आई थी। इधर सरकारी अदालतों में भी उर्दू का ही बोल बाला था। इन अभावों की पूर्ति के लिए सं० १६५० विक्रमी में काशी नागरी प्रचारणी सभा की स्थापना हुई। इसका मुख्य उद्देश्य हिन्दी प्रचार और उसके साहित्य की श्री वृद्धि करना था।

इसके उद्योग से उर्दू के साथ अदालतों में हिन्दी भाषा को भी स्थान मिला। कितनी ही मालाओं द्वारा प्राचीन कवियों के सम्बन्ध में अनुसन्धान कर उत्तमोत्तम ग्रन्थ प्रकाशित किए गये। इतिहास लेखकों के लिये कितनी ही सामग्री खोज कर एकत्रित की गई। हिन्दी शब्द सागर नामका बृहद् कोष प्रकाशित किया गया। सम्वत् १६६७ में इसी के उद्योग से हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना की गई। सम्मेलन द्वारा हिन्दी साहित्य की परीक्षाओं का आयोजन कर साहित्य-प्रचार का काफ़ी कार्य हुआ है। इन संस्थाओं द्वारा आज हिन्दी साहित्य इतना सपन्न बन गया है कि वह किसी भी उन्नत भाषा के समकक्ष होने का दावा कर सकता है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

आप का जन्म रायबरेली ज़िले के दौलतपुर ग्राम में सम्वत् १६२१ में हुआ था। आप पहले रेलवे में १५०) मासिक के उच्चपद पर आसीन थे किन्तु हिन्दी सेवा के लिए उसे ठुकरा कर आपने 'सरस्वती' का सम्पादन कार्य संभाला। सम्पादकरूप में हिन्दी भाषा और साहित्य की आपने काफी सेवा की है। व्याकरण की शुद्धता, भाषा के परिष्कार और विराम चिह्नों के व्यवहार आदि के लिए हिन्दी साहित्य चिरकाल तक आपका ऋणी रहेगा। समालोचना के आदर्श का मापदण्ड स्थापित करने, नवीन लेखक और उत्तम विचारक बनाने का भी बहुत कुछ श्रेय आप को ही है।

इधर अनुवादों की भरमार ने गद्य की शैली को भ्रष्ट कर दिया था। द्विवेदी जी ने किसी सीमा तक उसे निश्चित किया है। खड़ी बोली में जान डालने में भी आपने पर्याप्त परिश्रम किया है। आपने हिन्दी महाभारत, हिन्दी भाषा की उत्पत्ति, शिक्षा, संपत्ति शास्त्र, वेकन चरितावली, स्वतन्त्रता आदि अनेकों पुस्तकें लिखी हैं। अनुवाद भी आप ने कितने ही ग्रन्थों का किया है। समालोचना लिखने में भी आप आपने समय के अद्वितीय पण्डित हैं। आजकल आप दौलतपुर में ही रहकर अपना जीवन भगवद्भक्ति में व्यतीत कर रहे हैं।

उपन्यास और गल्प

कथा-कहानी साहित्य भारतीयों की अपनी चीज़ है। संस्कृत के

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

साहित्य से ही विश्व इतिहास ने यह पाठ पढ़ा है। हिन्दी भाषा में भी कहानी साहित्य का अवतरण सीधा संस्कृत से हुआ है। वैताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी, नासिकेतोपाख्यान, माधोनल को लेकर ही सदल मिश्र और लल्लू लाल हिन्दी गद्य में आए थे ये चारों ही संस्कृत से अनूदित हैं। साहित्य की इस शाखा का श्रीगणेश प्रायः अनुवाद से ही आरंभ होता है। भारतेन्दु के समसामयिक गदाधर सिंह का अनुवादकों में विशेष स्थान है। आपने बङ्गला के कई उपन्यासों का हिन्दी में अनुवाद किया। इसके बाद राम कृष्ण वर्मा ने अंग्रेज़ी और उर्दू से अनुवाद किया था। इनके समकालीन कार्तिकप्रसाद ने भी कई उपन्यासों का अनुवाद किया था।

इसके अनन्तर गोपालराम गहमरी भी बंग भाषा के गार्हस्थ उपन्यासों के अनुवाद के साथ हिंदी में पदार्पण करते हैं; आप की शैली मनोरञ्जक और चटपटी है। आप के उपन्यासों में नये बाबू, देवरानी जेठानी, दो बहिनें, सास-पतोहू आदि हैं। सम्वत १६४५ के लगभग 'हरिऔध' उर्दू का 'वेनिस का बाँका' संस्कृतमयी हिन्दी में लेकर इस क्षेत्र में दिखलाई पड़े। बंग भाषा के बंकिमचन्द्र, शरच्चन्द्र, चण्डीचरण आदि के उपन्यासों के अनुवाद के बाद रवीन्द्र बाबू का नम्बर आया। पं० रूपनारायण पाण्डे और ईश्वरी प्रसाद शर्मा ने इस ओर काम करके अनुवाद की शैली को कुछ सुष्ठ और परिमार्जित कर दिया।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

वैज्ञानिक सभ्यता के विकास के साथ जब लोगों के मनोरञ्जन के लिए उपन्यास पढ़ने में अधिक समय लगाना पड़ा तो उन्हें यह सौदा महँगा जँचा और अंग्रेज़ी की पत्रिकाओं में गल्पों का आविर्भाव हुआ। हिंदी में गल्पों के प्रथम दर्शन 'सरस्वती' में हुए जिनके अनुवादक थे गिरजा कुमार घोष (पार्वती नन्दन)। धीरे धीरे मौलिक कहानियाँ भी निकलने लगी।

अस्तु अनुवाद को छोड़ कर हम भी मौलिक उपन्यास और कहानियों की ओर बढ़ते हैं। नरेन्द्रमोहनी, कुसुम कुमारी, चन्द्रकांता, चंद्रकांता संतती आदि ऐय्यारी के मौलिक उपन्यास लेखक के रूप में सर्वप्रथम देवकीनन्दन खत्री हमारे सामने अपनी खिचड़ी भाषा में आते हैं। इन उपन्यासों द्वारा पाठकों में उत्कण्ठा और निम्न वृत्तियों को जाग्रत करने के अतिरिक्त कोई दूसरा तत्व नही मिलता। इसलिये हम इन रचनाओं को साहित्य में स्थान नहीं दे सकते। हाँ, हिंदी-प्रचार की दृष्टि से इनका महत्व कम नहीं। केवल चन्द्रकाँता को ही पढ़ने के लिए न जाने कितने उर्दू जानने वालों ने हिंदी सीखी थी। हरिकृष्ण जौहरी भी ऐसे ही लेखक थे। किशोरीलाल गोस्वामी ने तारा, चपला, रजिया, इन्दुमती, राजकुमारी लवंगलता, हृदय हारिणी, हीराबाई आदि उपन्यास लिख कर इस क्षेत्र में इतिहास, समाज-चित्रण आदि का समावेश तो कर दिया किंतु गतिशीलता लाने में यह भी समर्थ न हुए। अयोध्यासिंह उपाध्याय ने ठेठ हिंदी का ठाठ और अधखिला फूल नामक दो उपन्यास लिखे। इन दोनों में औपन्यासिक तत्व नहीं,

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri
भाषा की बानगी ज़रूर है। इसी कोटि में हम लज्जाराम मेहता के धूर्त रसिकलाल, बिगड़े का सुधार और आदर्श हिंदू आदि की भी गणाना करते हैं।

सम्वत १६६६ में बृजनन्दन सहाय बी० ए० के सौन्दर्योपासक और राधाकांत उपन्यासों को वेगवती व्यंजना, भाव प्रधानता और मनोविकार प्रगल्भता के कारण साहित्य में स्वीकार किया जा सकता है! बीसवीं शताब्दी की दूसरी दशाब्दी में हिन्दी कहानियों और उपन्यासों का रूप और विषय बहुत कुछ बदल गया। कथोपकन का बाहुल्य और कुछ चरित्र-चित्रण पर ज़ोर देने के कारण साहित्य की यह शाखा भी परिमार्जित होने लगी। इस धारा को विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक ने अपनाया। सन् १६११ ई० से जयशङ्कर प्रसाद ने भी कहानियाँ लिखने का श्री गणेश किया। इनकी कहानियों में बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों और अध्यात्म-वाद का पुट मिलता है। चरित्र-चित्रण, कहने का ढङ्ग, सभी कुछ सुन्दर है। किन्तु भाषा भावों के अनुकूल है, कहानियों के नहीं।

आपने इस क्षेत्र में आकर वास्तव में क्रान्ति उपस्थित कर दी।

प्रेमचन्द्र — 'वरदान' प्रेमाश्रम, रङ्गभूमि, ग़बन, कर्मभूमि, गोदान आदि उपन्यास विश्लेषण, चित्रण, कला सभी दृष्टियों से सुन्दर हैं। आप की कहानियाँ अपने क्षेत्र में आदर्श हैं। उनमें राष्ट्र की आत्मा साहित्य के साथ स्वर मिलाकर बोल रही है। हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने जिस तरह शहरों और नगरों को पार कर

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

देहातों पर निगाह जमाई है, उसी तरह प्रेमचन्द जी ने कहानी के नवीन साहित्य द्वारा किसानों और मज़दूरों के मनोविकारों को हर एक पहलू से टटोला है।

जैनेन्द्र कुमार

आपने भी साहित्य की इस शाखा में सुनीता, हृदय की प्यास, त्यागपत्र आदि कई उपन्यास लिखे हैं। आप की कहानियों का एक संग्रह 'फाँसी' तथा एक 'एक रात' के नाम से प्रकाशित हुआ है। प्रारम्भ में विचार और प्रदर्शन शैली, दोनों ही दृष्टियों से आप की कहानियाँ एक आकर्षक नवीनता लिये हुए सुलझी होती थी; किंतु धीरे धीरे कदाचित् अत्यधिक गाम्भीर्य के कारण उनमें दुरूहता आती जा रही है। इधर त्यागपत्र उपन्यास में आप की शैली ने स्पष्टता की ओर फिर पलटा खाया है। यदि आप ने आगे चल कर अपनी कहानियों में एक तरह के छायावाद का समावेश न किया तो आपकी कहानियाँ निस्सन्देह साहित्य की अनूठी चीज़ होंगी।

सुदर्शन

आप उपन्यास और गल्प दोनों के ही सफल लेखक हैं। आप के कई उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं और सुदर्शन सुधा तथा सुप्रभात नाम के दो कहानी संग्रह भी। आप की रचनाओं में साम्प्रयिक भावनाओं का अच्छा प्रतिबिंब पड़ा है।

विनोदशंकर व्यास

थोड़े ही समय में आप ने लोगों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है। आप की छोटी और गठी हुई कहानियों में जीवन के छोटे २ मार्मिक चित्र होते रहते थे। करुणा, कसक, रूखा स्नेह आदि आप

CC-0. In Public Domain.

की कहानियाँ अच्छी हैं। इधर आप सोगए से जान पड़ते हैं।
Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आप ने भी हृदय की परख, हृदय की प्यास, आदि कई उपन्यास लिखे हैं। आप की कहानियाँ भी सुन्दर होती हैं। आप की शैली मंजी और कहने का ढङ्ग अपना है।

चतुरसेन शास्त्री

आधुनिक काल के कहानी लेखकों में आप की कहानियाँ सुन्दर होती हैं। राष्ट्र-हृदय की विद्रोह भावनाओं का उनमें अच्छे ढङ्ग से व्यक्तीकरण होता है।

सच्चिदानन्द 'अज्ञेय'

आधुनिक कहानी साहित्य में आप का भी अपना अलग स्थान है। आप की भाषा परिमार्जित, शैली आकर्षक और कहने का ढङ्ग सुन्दर होता है।

चन्द्रगुप्त विद्यालङ्कार

इनके अतिरिक्त भगवती प्रसाद वाजपेई, सदगुरशरण अवस्थी, चण्डीप्रसाद 'हृदयेश', जनार्दनप्रसाद झा ,द्विज' प्रफुल्लचन्द ओझा 'मुक्त', भारतीय एम० ए०, राजेश्वरप्रसाद, सिंह पृथ्वीनाथ शर्म्मा, उपेन्द्रनाथ 'अश्क' मोहनलाल महतो, बेचन शर्मा 'उग्र', गिरजादत्त शुक्ल 'गिरीश', पदुमलाल पन्नालाल बख्शी, डा० रमाशंकर मिश्र आदि भी कहानियाँ लिखते हैं।

नाटक

कथा कहानियों की भाँति नाटक का सिलसिला भी हिन्दी में संस्कृत से ही आरम्भ शुरू हुआ किन्तु विलम्ब से। इसका

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

कारण हिन्दी गद्य के विकास का इतिहास है। नाटकों के लिए बोल-चाल की चलती भाषा अपेक्षित है। ऐसी भाषा गद्य के समुचित विकास होने पर ही मिल सकती है। फिर भी ब्रजभाषा में नाटकों के अनुवाद हुए हैं। हृदयराम ने सम्वत् १६८० में हनुमन्नाटक, नेवाज ने शकुन्तला नाटक, बृजवासीदास ने प्रबोधचन्द्रोदय नाटक, रीवा नरेश विश्वनाथ सिंह ने आनन्दरघुनन्दन नाटक गिरधर दास ने नहुष नाटक लिखे और अनुवाद किए हैं। इन्हें हम कहने मात्र के लिये नाटक लिखते हैं किन्तु साहित्य की दृष्टि से इन्हें नाटक स्वीकर नहीं किया जा सकता। सन् १८६३ में राजा लक्ष्मणसिंह द्वारा अनूदित अभिज्ञान शकुन्तला नाटक, भाव भाषा और अभिनय की दृष्टि से सुन्दर है और उसकी गणना नाटकों में की जाती है।

खड़ी बोली में नाटक-रचना का आरम्भ भारतेन्दु ने ही किया है। आपने मौलिक नाटक भी लिखे और अनुवाद भी किया। चन्द्रावली, अन्धेर नगरी, विषस्य विषमौषधम, प्रेमयोगिनी, वैदिक हिंसाहिंसा न भवति, भारत दुर्दशा, नीलदेवी, सतीप्रताप (अपूर्ण) प्रेमयोगिनी (अपूर्ण) आपके मौलिक नाटक हैं। विद्या सुन्दर, सत्य हरिश्चन्द्र, अन्य नाटकों के आधार पर लिख गए तथा मुद्राराक्षस, कर्पूरमंजरी, धनंजय विजय, पाखण्ड विडम्बन अनूदित नाटक हैं। भाव, भाषा नाट्यकला आदि सभी दृष्टिकोणों से ये नाटक अच्छे बन पड़े हैं।

भारतेन्दु-मण्डली द्वारा भी नाटक-साहित्य का अच्छा विकास

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

हुआ। श्री निवासदास ने प्रह्लाद, संयोगिता-स्वयम्वर, तप्तास-वरण आदि, बद्रीनारायण ने वृद्ध विलाप, भारत सौभाग्य, वारांगना रहस्य, प्रयाग रामागमन, मथुराप्रसाद चौधरी ने साहसेन्द्र साहस, (अनुवाद) प्रताप नारायण मिश्र ने कलिकौतुक रूपक, कलि प्रभाव, हठी हमीर, जुवारा खुवारी; कृष्णदेव शरणसिंह ने माधुरी; तोताराम ने केटोकृतांत; केशवराम ने शमशाद सौसन, सज्जाद संबुल; अम्बिकादत्त व्यास ने ललिता नाटिका, गो संकट; देव पुरुष दृश्य, भारत सौभाग्य तथा मरहट्टा; अमानसिंह ने मदन मंजरी; राधाकृष्ण ने दुःखिनी बाला, पद्मावती तथा प्रताप; बालकृष्ण ने पद्मावती, शर्मिष्ठा तथा चन्द्रसेन; देवकी नन्दन त्रिपाठी ने जयनरसिंह की होली, खगेश, चक्षुदान, कलयुगी विवाह, जनेऊ आदि प्रहसन, शीतला प्रसाद त्रिपाठी ने जानकी मंगल, बालेश्वर प्रसाद ने वेनिस का सौदागर लिखा था।

भारतेन्दु के इहिलोक लीला संवरण करने से नाट्य-धारा का प्रवाह धीमा पड़ गया। बङ्गला, संस्कृत आदि नाटकों के अनुवाद यदा कदा होने लगे। रामकृष्ण वर्मा ने कृष्ण कुमारी, पद्मावती, अयोध्यासिंह उपाध्याय ने रुक्मिणी-परिणय, किशोरी लाल ने चौपट चपेट, वर्षा की बहार, मयंक मंजरी; सीताराम बी० ए० ने नागानन्द मृच्छकटिक, महावीरचरित्र आदि नाटकों का अनुवाद किया।

बीसवीं शताब्दी के साथ नाटकों की धारा में परिवर्तन हुआ। अब तक गद्य-पद्यमय नाटकों की जो प्रथा चली आती थी उसमें

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सुधार हुआ। नाटक गद्यमय लिखे जाने लगे और उनमें कविताएँ गीतों के रूप में २—४ की संख्या में ही रह गई। इस समय हिन्दी में रूपनारायण पाण्डेय ने बङ्गला के द्विजेन्द्रलाल राय तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि के सुन्दर नाटकों के अनुवाद किए! सम्वत् १६१० में सत्यनारायण कविरत्न ने भूवभूति के रामचरित्र मानस और मालती माधव का अनुवाद कर प्रकाशित किया। पण्डित सत्यनारायण का अनुवाद बहुत सफल और सुन्दर हुआ है। माधव शुक्ल का महाभारत नाटक द्विवेदी काल की एक उत्तम रचना है।

शनैः २ हिन्दी का नाटक साहित्य भी सम्पन्न होने लगा, थियेटर कम्पनियों ने भी इन नाटकों को अपनाना आरम्भ किया। नारायण प्रसाद 'बेताब' का महाभारत नाटक सर्वप्रथम अल्फ्रेड कम्पनी में अभिनीत हुआ। आग़ा हश्र, हरिकृष्ण 'जौहर' और राधेश्याम कथावाचक के नाटकों का भी थियेटर के रंगमंच पर बराबर अभिनय होता रहा।

आधुनिक काल के मौलिक नाटककारों में जयशङ्कर 'प्रसाद' अपनी विशेषताएँ लेकर आए थे। इनके नाटकों

जयशंकर 'प्रसाद' में जो कुछ है, सब मौलिक हैं। इनकी अपनी अलग स्वतन्त्र शैली है जिसमें प्राच्य तथा पाश्चात्य नाट्य शैलियों का सम्मिश्रण हुआ है। इनके नाटकों की कथावस्तु पौराणिक अथवा ऐतिहासिक है, जिनका विवेचन वैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया गया है। भाषा गम्भीर और किञ्चित क्लिष्ट है। अजातु शत्रु, जनमेजय का नागयज्ञ, स्कन्दगुप्त, चन्द्रगुप्त आदि नाटक उल्लेखनीय हैं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

माखनलाल चतुर्वेदी का कृष्णार्जुन युद्ध, जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिंद' का प्रताप-प्रतिज्ञा, गोविन्दवल्लभ पन्त का वरमाला, ये तीनों हिन्दी के नाट्य साहित्य में अपना विशेष स्थान रखते हैं। तीनों ही का आधार ऐतिहासिक अथवा पौराणिक है किन्तु दृष्टिकोण बिल्कुल नया है। भाषा भाव और अभिनय की दृष्टि से तीनों नाटक सुन्दर हैं। लेखक-त्रय की इन रचनाओं ने पाठको के हृदय में बहुत कुछ आशा बँधाई थी किन्तु न जाने क्यों इन्हों ने इस ओर अधिक लिखने का यत्न नहीं किया।

'चतुर्वेदी' 'मिलिंद' पंत'

स्वर्गीय बदरीनाथ भट्ट ने चन्द्रगुप्त, तुलसीदास, बेन चरित्र, दुर्गावती आदि कई नाटक लिखे हैं, और हास्य रस के छोटे-छोटे सफल प्रहसन भी।

बद्रीनाथ भट्ट

वर्तमान नाटककारों में 'प्रेमी' का अपना अलग अलग स्थान है। आप के नाटकों की कथावस्तु प्रायः ऐतिहासिक होती है किन्तु नवीनता के रङ्ग में शराबोर। युगधर्म की मुद्रा सर्वत्र ही दिखलाई पड़ती है। भाव, भाषा, शैली और अभिनय, सब में ही कुछ न कुछ अनोखापन रहता है। सर्वसाधारण में आप के नाटकों का अच्छा आदर है। आप के कई नाटकों के सफल अभिनय भी हो चुके हैं। पाताल विजय, रक्षा बन्धन, प्रतिशोध, शिवासाधना उल्लेखनीय हैं। आज कल आप स्वप्न भंग नाम का एक सुन्दर नाटक लिख रहे हैं।

हरिकृष्ण 'प्रेमी'

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

सामाजिक नाटक लिखने में आप को विशेष सफलता मिली है। आप ने अब तक अशोक, सन्यासी, मुक्ति

लक्ष्मीनारायण मिश्र का रहस्य आदि नाटक लिखे हैं।

आप अच्छे नाटककार हैं। सगर विजय, अम्बा और दाहर नाटक प्रकाशित हो चुके हैं। भाषा संस्कृतमय

उदयशङ्कर भट्ट होती हैं। नाटक रंगमंच के उपयुक्त न हो कर साहित्यिक हैं।

और भी कितने ही लेखक इस क्षेत्र में कुछ-कुछ काम कर रहे हैं। जी० पी० श्रीवास्तव ने अंग्रेजी के कई नाटकों का अनुवाद किया है और एक मौलिक नाटक भी लिखा है। प्रेमचन्द्र जी का कर्बला' और सुदर्शन का 'अञ्जना' नाटक भी अच्छा है। वर्तमान समय में एकांकी नाटकों और भावनाटकों का लिखना भी आरम्भ हो गया है। हिन्दी वालों के पास अपना रङ्गमंच न होना भी नाट्य साहित्य के विकास में एक बहुत बड़ी बाधा है।

समालोचना

साहित्य के सर्वाङ्गीण सम्पन्न होने पर ही समालोचना का कार्य प्रारम्भ होता है। यह साहित्य की सुधाधारा को समुज्वल रखने का एक साधन है। इस कवच द्वारा ही साहित्य में सुलेखकों और सुकवियों का स्थान सुनिश्चित और सुरक्षित होता है। हिंदी साहित्य में बद्रीनारायण चौधरी ने 'आनन्द-कादम्बिनी' पत्रिका में इसको प्रारम्भ किया था।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

आपने इस क्षेत्र को प्रामाणिक, प्रशस्त और परिमार्जित किया है एवं समालोचना साहित्य में दो प्रकार की शैलियों का अवलम्बन लिया है, निर्णयात्मक और परिचयात्मक। पहली शैली में कालिदास की निरंकुशता नामक पुस्तक है और दूसरी में विक्रमांकदेव चरित्र चर्चा, नैषधचरित्र चर्चा। आप ने पुस्तकों के अतिरिक्त समय समय पर सुन्दर लेख लिखकर हिन्दी प्रेमियों को एक विशिष्ट मार्ग दिखलाया है।

मिश्र बन्धु

साहित्य का अनुशीलन कर गवेषणात्मक ढङ्ग से आपने इस दिशा में अच्छा परिश्रम किया है। मिश्र बन्धु विनोद, हिन्दी नवरत्न आदि आप के विवेचनात्मक ग्रंथ हैं।

श्यामसुंदर दास

समालोचना सम्बन्धी साहित्य के अभाव के कारण, अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त सज्जन अरस्तू से लेकर मैथ्यू आरनल्ड की उक्तियों का अनुवाद करके हिन्दी के समालोचना क्षेत्र में आगे बढ़ रहे थे। आप ने अपने इतिहास ग्रन्थ में इस समस्या को बहुत कुछ सुलझा दिया है। 'साहित्यालोचन' पुस्तक द्वारा भी विद्यार्थियों को काफी लाभ पहुँचा है।

रामचंद्र शुक्ल

वर्तमान समालोचना क्षेत्र में आप आचार्य माने जाते हैं। अनुसन्धानात्मक शैली द्वारा लिखा आप का हिन्दी साहित्य का इतिहास, एक अनुपम ग्रन्थ है। तुलसीदास और जायसी पर

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

लिखे गए आप के निबन्ध, समालोचना साहित्य में बड़े मार्के की चीज़ हैं। रस और अलंकारों की प्रद्धति का वैज्ञानिक आलोचनात्मक विवेचन करके आप ने भावी समालोचकों के लिए एक सुदृढ़ नींव डाल दी है।

हिन्दी साहित्य विमर्श और विश्व साहित्य नामक दो पुस्तकें लिख कर आप ने समालोचना साहित्य को सम्पन्न बनाने में बहुत कुछ सहायता की है। आप नपे तुले शब्दों में थोड़ी सी भावुकता और अधिक सतर्कता के साथ अपनी बात कहते हैं।

पदुमलाल पन्नालाल बख्शी

जनार्दन प्रसाद झा 'द्विज' ने प्रेमचन्द की 'उपन्यास कला' रामकृष्ण शुक्ल ने प्रसाद की नाट्यकला, रामनाथ सुमन ने 'कवि-प्रसाद की काव्य साधना', कृष्ण बिहारी मिश्र ने, देव और बिहारी, श्री पद्मसिंह शर्मा ने बिहारी सतसई, हिन्दी गद्य शैली का विकास, डाक्टर सूर्यकान्त ने हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास, हरिहर निवास द्विवेदी ने 'महात्मा कबीर', शान्तिप्रिय द्विवेदी ने कवि और कविता, ज्योतिप्रसाद 'निर्मल' ने नवयुग काव्य विमर्श, रामकुमार वर्मा ने, कबीर का रहस्यवाद लिखकर साहित्य की इस शाखा के भण्डार को भरा है। पत्रिकाओं में भी कतिपय विद्वान लेखक इस विषय पर लिखा करते हैं जिनमें लोकनाथ सिलाकारी, नन्ददुलारे वाजपेई, रामदयाल तिवारी, हज़ारीप्रसाद द्विवेदी और नलिनी मोहन सान्याल के नाम उल्लेखनीय हैं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

फुटकर

गौरीशङ्कर हीराचंद ओझा

आपका जन्म सिरोही राज्यान्तर्गत रोहिड़ी ग्राम में सं० १६२० में हुआ था। आप हिन्दी संस्कृत के विद्वान् और अंग्रेज़ी के ज्ञाता हैं। पुरातत्व अनुसन्धान में आप बड़े प्रवीण और अजमेर अजायब घर के अध्यक्ष हैं। आपके प्रयत्न से हिन्दी के इतिहास विभाग के भण्डार में कई अमूल्य ग्रन्थों का समावेश हुआ है। आप इतिहासिक ग्रन्थमाला नामक एक पुस्तकावली प्रकाशित कर रहे हैं। आपने प्राचीन लिपिमाला, सिरोही का इतिहास सोलंकियो का इतिहास, प्राचीन लिपिमाला, टाड राजस्थान का सटिप्पणी अनुवाद, कर्नल टाड का जीवन चरित्र आदि ग्रन्थ रचे हैं।

गणेशशङ्कर विद्यार्थी

आप का अधिकांश जीवन कानपुर में ही व्यतीत हुआ था। आप उच्चकोटि के लेखक, यशस्वी सम्पादक और उत्साही राष्ट्रकर्मी थे। 'प्रभा' नाम की पत्रिका और कानपुर के 'प्रताप' के संस्थापक और सम्पादक थे। आपने अंग्रेज़ी के कई ग्रन्थों का अनुवाद भी किया था। इनमें 'वलिदान' विशेष उल्लेखनीय हैं।

के. पी. जायसवाल

काशी प्रसाद जैसवाल पुरातत्व विषय के माने हुए विद्वान् थे। आपकी इतिहास सम्बन्धी पुस्तकों की विदेशों में भी धाक है। आपने भारत के प्राचीन गौरव को प्रकट किया है और भारतीय इतिहास के सम्बन्ध में विदेशी विद्वानों की अनेक धारणाओं को ग़लत सिद्ध किया है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

बनारसीदास चतुर्वेदी आप 'विशाल भारत' के जन्म से ही सम्पादक थे। सुन्दर जीवनियाँ लिखकर आपने साहित्य-भण्डार के एक अभाव की पूर्ति की है।

रामदास गौड़ गौड़ जी ने विज्ञान सम्बन्धी अनेकों उपयोगी ग्रन्थ लिख कर भारती के भण्डार को भरा है। बाल साहित्य भी आप ने काफ़ी लिखा है।

हरिभाऊ उपाध्याय हिन्दी के विवेकपूर्ण लेखक हैं। 'त्यागभूमि' का सम्पादन आप ने बहुत सफलतापूर्वक किया है। महात्मा गांधी और पं० जवाहरलाल नेहरू की आत्म-कथाओं का अनुवाद भी किया है। आप के राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक लेखों के संग्रह भी निकले हैं।

रमाशंकर मिश्र ये लखनऊ जिलान्तर्गत समेसी ग्राम के निवासी हैं। सामयिक पत्र-पत्रिकाओं में भी 'त्रिलोचन' 'आशुतोष' आदि नामों से लिखा करते हैं। इनका लिखा हुआ 'महान भारत' हिन्दी में अपने ढङ्ग का एक ही ग्रन्थ है। आप ने 'शारदाभरण आदि अन्य पुस्तकें भी लिखी हैं।

इनके सिवा अन्नपूर्णानन्द और जे० पी० श्रीवास्तव हास्यरस के सुन्दर लेखक हैं। फूलदेव सहाय वर्मा, शालिग्राम, डाक्टर गोरखनाथ ने विज्ञान पर, भोलादास ने कानून पर, विश्वेश्वरनाथ रेऊ और जयचन्द्र तथा सत्यकेतु ने इतिहास पर ग्रन्थ लिखे हैं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

पत्र-पत्रिकाएँ

पत्र-पत्रिकाएँ भी साहित्य का एक अग और माँ भारती की वीणा हैं। अस्तु उनका वर्णन भी साहित्य के इतिहास में अपेक्षित है। भारतेन्दु काल के उत्तरार्द्ध तक के पत्र-पत्रिकाओं के सम्बन्ध में यत्किञ्चित लिखा जा चुका है। उसे दोहराना ठीक नहीं।

यहां बीसवीं शताब्दी के साथ-साथ दर्शन देनेवाले पत्र-पत्रिकाओं के सम्बन्ध में कुछ लिखेंगे। नागरी-प्रचारणी सभाके तत्वावधानता में इलाहबाद नगर में 'सरस्वती' का जन्म हुआ था। इसके साथ अनेक पत्र-पत्रिकाएँ निकलीं, उन का रंग-रूप भी निखरा। इस के अनुकरण पर कमला, इन्दु, लक्ष्मी, प्रभा, प्रतिमा, शारदा, मनोरमा मर्यादा आदि अनेकों पत्रिकाएँ निकलीं। हिन्दी संस्कृत के विद्वान चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के सम्पादकत्व में 'समालोचक' पत्र निकाला, जिस में गहन विषयों पर मनोरञ्जक लेख होते थे। तरंगिनी नाम की पत्रिका केवल दो वर्ष तक ही प्रकाशित हो सकी। इसके संस्कृत साहित्य सम्बन्धी लेख गवेषणापूर्ण और पठनीय होते थे। आरा का मनोरञ्जन और कानपुर का हिन्दी-मनोरञ्जन भी पाठकों का कुछ काल तक मनोरञ्जन करता रहा। काशी से निकलने वाला 'मालव मयूर' अपने राजनीतिक लेखों और ज्ञान मण्डल काशी का 'स्वार्थ' अपने अर्थशास्त्र सम्बन्धी उत्कृष्ट लेखों से पाठकों की ज्ञानवृद्धि कर विलीन हो गया। काशी का 'नवनीत' लखनऊ का 'नागरी प्रचारक' और 'ग्रामीण' भी अपने अपने विषय के निराले पत्र थे। अजमेर की त्यागभूमि

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

और लाहौर की 'भारती' बहुत दिनों तक पाठकों की स्मृति में क्रान्ति मचाती रहेगी।

आजकल कलकत्ते का 'विश्वमित्र' और 'विशाल भारत' इलाहाबाद की 'सरस्वती' और 'चाँद' लखनऊ की 'सुधा' और 'माधुरी' काशी का 'हंस' पाठकों की यथाशक्ति सेवाएँ कर रहे हैं। इन्दौर की 'वीणा' काशी का 'विज्ञान' गोरखपुर का 'कल्याण', कानपुर का 'कवि', प्रयाग की 'माया' सभी अपने-अपने स्थान पर पाठकों का ज्ञान-वर्धन कर रहें हैं। फिर भी जबलपुर की 'प्रेमा' का प्रेम, बिहारी 'गंगा' की तरङ्ग आज भी स्मृति को डाँवाडोल कर रही है। लहरियासराय का 'बालक' हिन्दी मन्दिर का 'बानर' इंडियन प्रेस का 'बाल सखा' और दूध बताशा अपने अपने क्षेत्र में आज भी किल्लोल कर रहे हैं।

"रूपाभ" अपनी आभा से कालाकांकर को भर ही रहा था कि अवधेश के अवतरण का सम्वाद मिल गया। भारत जैसे विशाल महादेश के लिए इतनी पत्रिकाएँ भी पर्याप्त नहीं हैं। अभी इस क्षेत्र में विकास की बहुत गुञ्जाइश है।

साप्ताहिक

पटना का 'पाटलीपुत्र' लखनऊ का 'लक्ष्मण' और 'अवधवासी' लाहौर की 'आकाश वाणी' और कलकत्ते की 'विश्व वाणी' की गम्भीर ध्वनि बन्द होगई। 'कर्मयोगी' 'भविष्य' 'तरुण राजस्थान' 'देश' हिन्दू पञ्च, 'श्रीकृष्ण सन्देश' 'हिन्दी केसरी' की दहाड़ अब कहाँ सुनाई पड़ती है! 'जागरण' का सन्देश अब कौन देता है? 'मनसुखा' 'मौजी' और 'मतवाला' की बहकी बातें सुनने के लिए आज भी पाठकों के हृदय उत्कण्ठित है।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

फिर भी कानपुर में 'प्रताप' विद्यार्थी जी की स्मृति जगा रहा है, 'नवशक्ति' और 'योगी' पटना में स्फूर्ति भर रहा है। 'जनता' किसानों को सङ्गठित कर रहा है। 'भारत' और 'अभ्युदय' 'त्रिवेणी' तट पर अलख जगा रहे थे, अब 'देश-दूत' और आ गरजा है। लखनऊ के नवाबी शहर में 'संघर्ष' अपनी भेरी बजा रहा है। खण्डवा से 'कर्मवीर' और 'स्वराज्य' वैसे ही निकल रहे हैं। कलकत्ते के उर्वर क्षेत्र से 'लोकमान्य' 'विश्वमित्र' 'जागृति' 'सचित्र भारत' उसी आन-बान से बोल रहे हैं।

पंजाब में श्री माधव के संपादकत्व में निकलने वाला एक मात्र 'विश्व बन्धु' अपने नए रंग-रूप में अकड़ रहा है। दिल्ली का 'अग्रसर' इलाहाबाद का 'मदारी' और लखनऊ का 'चक्कलस' अकोला का 'नवभारत', ब्यावर का 'राजस्थान' अजमेर का 'नवज्योति' भी जगमगा रहा है।

दैनिक

बनारस का 'आज' अपने गम्भीर और विवेक पूर्ण संपादन के लिए प्रसिद्ध राष्ट्रीय-पत्र है। कानपुर का 'प्रताप' गणेश जी के तेज को अभी तक प्रकट कर रहा है। वहीं का 'वर्तमान' अभी तक वर्तमान है। इलाहाबाद में 'भारत' अपना राग छेड़ रहा है। देहली के 'अर्जुन' और 'हिंदुस्तान' खूब लोक-प्रिय हैं। 'नवयुग' अब साप्ताहिक हो गया है। कलकत्ता का 'विश्वमित्र' बहुसंख्या में प्रकाशित हो रहा है लाहौर के 'हिंदी-मिलाप' और 'शक्ति' पंजाब की प्यास बुझा रहे हैं।

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६	५	(सन् १८८०)	(सन् १८८० में)
१०	२०	तक की	तक कि
१२	१३	रही होंगे	रहे होंगे
१२	१४	गीत्त	गीत
१५	१८	Franka	Franca
१६	२२	समृद्ध	समृद्धि
१७	१	कालिया	का ले लिया
१७	३	कविता शौक	कविता का शौक
२०	२	इंशा अलमा खाँ ने	इंशा अल्ला खाँ
२०	१३	अपनी	अपने
२७	६	दिया	दी
३३	१३	जिसमें	जिनमें
३३	१८	मुराह	सूरहि
३४	२१	जल	जन्म
३६	१५	वर्तात	वृतांत
३६	२०	उनके	उसके
३७	८	इस पुस्तव	इस पुस्तक (खुमान रासो)

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३८	४	इसका	इनका
३९	२१-२२	इससे इति गई	इससे सुलतान की सेना इति—कर्तव्य विमूढ़ हो गई।
५३	४	नानक	नानक के मन में
५५	८	है	था
५७	१०	नवीन	नवीनता
५९	२	परमेश्वर का	परमेश्वर और जीव का
६१	११	मलमगिरि	मलयगिरि
६७	७	गोकुल	गोकुल के
६७	९	तदात्म	तादात्म
६८	१५	उपनीत	उपस्थित
६९	२	लोकैषण	लोकैषणा
७०	१९	ये गोवर्धन	गोवर्धन
७१	२०	कंकन	कंकन किंकिनि
७२	७	कवि भी	कवि के
७७	७	फल-फूल	फल फूलनि
७८	१२	न जैहै है	न जैहै न जैहै
७९	१२	रहित	हित
८२	२१	ब्रजभाषा	ब्रजभाषा के

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८३	५	नीति-सम्बन्ध	नीति-सम्बन्धी
८४	२	सरोहर	सरोरुह
८४	३	झोलत	झूलत
८४	४	मृदुल	मृदु
८४	४	मेच कलाई	मेचकताई
८६	६	मुख	मुख न
८६	१२	झंझार	झांझर
९३	१६	साहित्यकों	साहित्यिकों
९५	१४	कलद्रुम	कल्पद्रुम
९६	५	साहित्यकों	साहित्यिकों
९७	१७	रूप्यक	रुय्यक
१०४	२२	इतनी	इनकी
१०५	१३	भी ये	भी
१०५	१४	ट्रयोंगा	ये ट्रयोंगा
१०५	१८	प्रसद	प्रसाद
१०७	१–२	कलीन है। किलकंत	कलीन किलकंत है।
१०७	३	पतंग	पंगत है
११०	२१	हृदयस्पर्श	हृदयस्पर्शी
१११	३	पइनि	पाइनि
११३	२२	दिली	ढंग कीली दिल्ली
११४	१०	मणिनाथ	मणिदेव

CC-0. In Public Domain.

Digitized by Sarayu Foundation Trust and eGangotri

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११४	१५	मणिराम	मणिदेव
११५	१७	जरासंध	जरासंध-वध
१२२	५	युक्त	मुक्त
१२६	२२	इनकी	इन्होंने
१४१	९	विशेता	विशेषता
१४१	११	हाव-भा	हाव-भाव
१४५	८	१९४७	१६४७
१४८	१६	माधोनल	माधावनल
१५१	२०	इन्होंने	ये
१५४	३	स्थाना	स्थापना
१५४	१२	नरेश के	के नरेश
१५५	२१	बंगाल	बंगला
१५९	११	तप्रासंवरण	तप्तासंवरण
१७१	५	रामचरितमानस	उत्तर रामचरित
१७१	२१	अजातुशत्रु	अजातशत्रु
१७२	१३	अलग-अलग	अलग
१७६	१०	इतिहास प्राचीन लिपिमाला	इतिहास
१७६	१९	जैसवाल	जायसवाल

R|NO 061.773/58/U

CC-0. In Public Domain.